ੴ सतिगुर प्रसादि ॥

गुर गिआन अंजन सचु नेत्री पाइआ ॥
अंतरि चानणु अगिआनु अंधेरु गवाइआ ॥

मासिक

गुरमति ज्ञान

आषाढ़-सावन, संवत् नानकशाही ५४५
वर्ष ६ अंक ११ जुलाई 2013

संपादक : सिमरजीत सिंघ एम. ए., एम. एम. सी.
सहायक संपादक : जगजीत सिंघ

चंदा

सालाना (देश)	१० रुपये
आजीवन (देश)	१०० रुपये
सालाना (विदेश)	२५० रुपये
प्रति कापी	३ रुपये

चंदा भेजने का पता

सचिव, धर्म प्रचार कमेटी
(शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी)
श्री अमृतसर-१४३००६
फोन: 0183-2553956-60

एक्सटेंशन नंबर
वितरण विभाग 303 संपादकीय विभाग 304

फैक्स: 0183-2553919
e-mail : gyan_gurmat@yahoo.com
website : www.sgpc.net

विषय-सूची

गुरबाणी विचार

बिनु सिमरन जैसे सरप आरजारी ॥ तिउ जीवहि साकत नामु बिसारी ॥१॥
एक निमख जो सिमरन महि जीआ ॥ कोटि दिनस लाख सदा थिरु थीआ ॥१॥रहाउ॥
बिनु सिमरन ध्रिगु करम करास ॥ काग बतन बिसटा महि वास ॥२॥
बिनु सिमरन भए कूकर काम ॥ साकत बेसुआ पूत निनाम ॥३॥
बिनु सिमरन जैसे सीङ छतारा ॥ बोलहि कूरु साकत मुखु कारा ॥४॥
बिनु सिमरन गरधभ की निआई ॥ साकत थान भरिसट फिराही ॥५॥
बिनु सिमरन कूकर हरकाइआ ॥ साकत लोभी बंधु न पाइआ ॥६॥
बिनु सिमरन है आतम घाती ॥ साकत नीच तिसु कुलु नही जाती ॥७॥
जिसु भइआ क्रिपालु तिसु सतसंगि मिलाइआ ॥ कहु नानक गुरि जगतु तराइआ ॥८॥ (पन्ना २३९)

श्री गुरु अरजन देव जी गउड़ी राग में उच्चारण किए गए उपरोक्त शबद में नाम-सिमरन की महत्ता का बखान करते हुए उच्चारण करते हैं कि सांप की आयु लंबी होती है। मनुष्य भी लंबी आयु पाकर बिना प्रभु-नाम-सिमरन के उसे व्यर्थ गंवा देता है। जैसे सांप की लंबी आयु भी उसे कोई लाभ नहीं दे पाती (और वो सारी आयु दूसरों को डंक मारने में ही बिता देता है), इसी तरह परमात्मा से दूर जा चुका मनुष्य लंबी आयु पाकर भी अपना जीवन (दूसरों को हानि पहुंचाने में) व्यर्थ गंवा देता है। जो मनुष्य पलक झपकने जितना समय भी सिमरन में गुज़ार दे, मानो उसने करोड़ों दिन जी लिया अर्थात् उसने लंबी आयु का सुख पा लिया, क्योंकि सिमरन की बरकत से मनुष्य का आत्मिक जीवन ऊंचा हो जाता है तथा वो सदा अडोल (विकारों के प्रभाव से मुक्त) जीवन वाला हो जाता है। प्रभु-नाम-सिमरन के बिना अन्य (सांसारिक) काम करने व्यर्थ हैं। जैसे कौए की चोंच सदा गंदगी में रहती है इसी प्रकार सिमरन से हीन मनुष्य का मुंह (निंदा-चुगली आदि की) गंदगी में रहता है।

गुरु जी सिमरन की महिमा के बारे में फरमान करते हुए आगे बताते हैं कि प्रभु-सिमरन को भुलाकर मनुष्य (अवगुणों में फंसकर) श्वान जैसे कामों में लिप्त हो जाता है तथा सिमरन से हीन मनुष्य का जीवन वेश्या स्त्री के पुत्र की भांति (बेहया) हो जाता है। परमात्मा के सिमरन के बिना मनुष्य धरती पर बोझ के समान है, जैसे छतारा (छतरा, भेडू) के सिर पर सींग। परमात्मा को भुला चुका मनुष्य सदा झूठ बोलता है और हर जगह मुंह काला करवाता है, बेइज्जती करवाता है। ऐसा मनुष्य गधे की भांति जीवन गुज़ारता है। जैसे गधा मिट्टी, राख में लेटकर खुश होता है इसी तरह बिना सिमरन वाला मनुष्य दुष्कर्मों वाली जगह पर भटकता रहता है। बिना सिमरन वाला मनुष्य पागल श्वान की भांति बन जाता है तथा लोभ में ग्रसित होकर कोई ठौर (स्थायी ठिकाना) नहीं पाता। जो परमात्मा का नाम नहीं जपता वो अपनी (आत्मिक) मृत्यु की ओर चला जाता है, जैसे वो आत्मिक रूप से खुदकुशी कर रहा हो, क्योंकि वो सदा मंद कर्मों की ओर रुचित रहता है। ऐसे मनुष्य का समाज में कोई (धार्मिक) रुतबा नहीं रहता। मनुष्य को परमात्मा की कृपा का पात्र बनना चाहिए, क्योंकि गुरु जी अंतिम पंक्तियों में फरमान कर रहे है कि जिस मनुष्य पर परमात्मा दयावान हो जाता है, उसे साधु-संतों की संगत नसीब हो जाती है। परमात्मा कृपा करके सारे जगत, संसार को (विकारों के भवसागर से) पार लगा देता है।

यादगार-ए-शहीदां नवंबर १९८४

सिक्ख कौम आरंभ से ही मेहनत-मशक़्क़त करने वाली कौम है। सिक्ख धर्म के संस्थापक श्री गुरु नानक देव जी ने सिक्ख धर्म का प्रचार-प्रसार "नाम जपो, किरत करो, वंड छको" के सिद्धांत पर किया है। न किसी से डरना, न किसी को डराना तथा अपने अधिकारों के लिए जूझ मरने की भावना प्रत्येक सिक्ख की नसों में है। जब्र-जुल्म से जूझते हुए सिक्खों के सिरों के दाम लगाये गए। बड़ी संख्या में सिक्खों का कत्लेआम हुआ, घल्लूघारे घटित हुए।

यह बात भी प्रत्यक्ष है कि जो कौमें अपनी विरासत, अपना इतिहास नहीं संभालती, वे दुनिया के नक्शे से खत्म हो जाती हैं। कौम के वारिसों का काम जहां इतिहास को पुस्तकों के पृष्ठों में संभालना है, वहीं ऐतिहासिक स्थानों की निशानदेही कर उनका निर्माण एवं रखरखाव करना होता है। इन स्थानों पर यादगारें कायम करके कौमें अपने इतिहास के प्रति दुनिया के प्रत्येक मनुष्य पर आकर्षक प्रभाव डालती हैं।

महाराजा रणजीत सिंघ के राज्य-काल के दौरान सिक्ख कुछ संभले तो इन्होंने अपनी ऐतिहासिक विरासतों को संभालकर यादगारें कायम करने का प्रयत्न किया। यह राज्य ज्यादा देर तक कायम न रह सका। कुछ घटिया सोच के मालिकों की करतूतों के कारण देश अंग्रेजों का गुलाम हो गया। सिक्खों द्वारा कायम की गई यादगारों के माध्यम से शहीदों की शहीदियां ललकार रही थीं कि सिक्ख कौम गुलामी नहीं सहती। इन यादगारों ने सिक्खों को गुलामी के विरुद्ध लड़ने एवं देशवासियों पर हो रहे जुल्म के विरुद्ध लामबंद होने की प्रेरणा दी। सिक्खों ने शहीदियों के अंबार लगा दिए, जेलें भर दीं, अंग्रेजों की नाक में दम कर दिया। आखिर अंग्रेजों को भारत छोड़कर जाना पड़ा, परंतु यह चालाक कौम (अंग्रेज) भारत छोड़कर जाते समय जहां भारतवासियों में फूट का बीज बो गई, वहीं साथ ही सिक्खों का बहुत सारा बहुमूल्य ख़जाना भी साथ ले गई। आजकल ये अमूल्य वस्तुएं इंग्लैंड के ब्रिटिश संग्रहालय में सिक्खों की बहादुरी की कहानियां सुना रही हैं।

पिछले कुछ वर्षों से सिक्खों में अपनी अन्य नयी विरासती यादगारें बनाने के लिए जागृति पैदा हुई है। वर्ष १९९९ ई. में सिक्ख कौम द्वारा खालसे की जन्म-शताब्दी बड़ी शानो-शौकत से मनाई गई। इस मौके सिक्खों ने श्री अनंदपुर साहिब की धरती पर अपने वारिसों के लिए 'विरासत-ए-खालसा' का शिलान्यास किया। अब यह अजूबे के रूप में तैयार होकर हमारे सामने आ चुका है। दर्शकों की भीड़ इसकी लोकप्रियता को दर्शा रही है। आधुनिक डिज़ीटल तकनीक के प्रयोग द्वारा बना यह अजूबा दुनिया भर के अजूबों में शामिल हो चुका है। पंजाबियत एवं सिक्खों की विरासत को यह बाखूबी पेश कर रहा है। बाबा बंदा सिंघ बहादर द्वारा की गई 'सरहिंद फ़तहि' की याद में चप्पड़चिड़ी के मैदान में 'फ़तहि बुर्ज' का निर्माण किया गया है। सन् १७४६ ई. में काहनूंवान की छंब (झिरी) में सिक्खों के साथ घटित हुए 'छोटे घल्लूघारे' की यादगार तथा सन् १७६२ ई. में कुप्प

शहीड़े की धरती पर घटित 'बड़े घल्लूघारे' की यादगार कायम करनी अपने वारिसों के लिए ऐतिहासिक जागृति पैदा करने की ओर अहम कदम है।

६ जून, १९८४ ई. का दिन सिक्खों के लिए बड़ा हृदयविदारक था। इस दिन श्री गुरु अरजन देव जी का शहीदी दिवस मनाने के लिए संगत गुरुद्वारा साहिबान में इकट्ठी हुई थी। अचानक ही कर्फ़्यू लगाकर सारे पंजाब का संपर्क दूसरे राज्यों से काट दिया गया। भारत की जंगी फौजों ने पंजाब में एक ही समय ३८ गुरुद्वारा साहिबान पर हमला कर दिया। हज़ारों की संख्या में सिक्ख अपने गुरु-घरों की रक्षा करते शहीद हो गए। इस वर्ष इस दुखांत की २९वीं वर्षगांठ पर शहीदों की यादगार बनकर तैयार हो चुकी है।

नवंबर, १९८४ ई में दिल्ली एवं देश के अन्य राज्यों में सिक्खों की नसलकुशी की जो हृदयविदारक घटनायें घटित हुईं वे इतिहास के पन्नों का अभिन्न अंग बन चुकी हैं। खुफिया विभाग की रिपोर्टें दबी आवाज़ में बाहर आना शुरू हो चुकी हैं कि सिक्खों का नामो-निशान मिटाने के लिए जो योजनायें बनायी जा रही हैं उनका भेद तत्कालीन प्रधानमंत्री के सिक्ख अंग-रक्षकों को पता चलने पर उनके ज़मीर ने उनको कौम के लिए कुर्बान होकर अपनी कौम को बचाने की प्रेरणा की। परिणामस्वरूप अपनी जान पर खेलकर उन्होंने प्रधानमंत्री का कत्ल कर दिया। अपनी योजना को फेल होता देखकर सिक्खों की नसलकुशी की योजना में शामिल भाईवालों ने सिक्खों का कत्लेआम करना शुरू कर दिया। इस कत्लेआम में हज़ारों की संख्या में शहीद हुए सिक्खों की जायदादें अग्नि-भेंट कर दी गयीं। साज़िशी योजना के अनुसार सिक्खों के कातिल अपने आकाओं को खुश करने के लिए बड़ी-बड़ी पदवियों की चाहत में एक-दूसरे से बढ़कर कत्लेआम में हिस्सा डालते रहे। पीड़ित परिवार २९ वर्षों से अदालतों में इंसाफ की गुहार लगाते आ रहे हैं परंतु दोषी सरेआम राजसी पदों पर आनंद ले रहे हैं। कानून २९ वर्ष तक भी दोषियों को उनकी सज़ाएं नहीं दे पाया।

गत दिनों सिक्खों द्वारा अपने इन शहीदों की यादगार बनाने का प्रशंसनीय फैसला किया गया। इस फैसले से विरोधियों पर इतना असर हुआ कि २९ वर्ष से दोषियों को सज़ा देने से असमर्थ सरकार ने रातो-रात यादगार को न बनाने का नोटिस दीवार पर चिपका दिया। सिक्खों ने इस चुनौती का डटकर विरोध करते हुए १२ जून, २०१३ ई को बुधवार वाले दिन सुबह १०:०५ बजे गुरुद्वारा श्री रकाबगंज साहिब के परिसर में इस यादगार का शिलान्यास कर दिया। १९८४ ई में कानून की उल्लंघना करके सरेआम सिक्खों का कत्ल करने वाले तथा उनकी तरफदारी करने वालों ने पूरे ज़ोर से शोर मचाना शुरू कर दिया कि सिक्ख कानून की उल्लंघना कर रहे हैं। क्या १९८४ ई की सिक्ख नसलकुशी के समय कानून की उल्लंघना नहीं हुई थी? क्या हम अपने इतिहास को आने वाली पीढ़ियों को बताने के लिए यादगार के रूप में सहेजकर नहीं रख सकते? सिक्ख नसलकुशी की यह यादगार सदा दोषियों को कोसती रहेगी और आने वाली पीढ़ियों को इतिहास से अवगत करवाकर, आगे से ऐसी घटना न घटित हो, इसका संदेश देती रहेगी। यह यादगार उन लोगों का धन्यवाद करती भी प्रतीत होती रहेगी जिन्होंने इस अति कठिन समय में अपनी जान की परवाह न करते हुए सिक्खों की मदद की। यह यादगार उन लोगों को श्रद्धांजलि भी होगी जिनको बिना किसी दोष के सिर्फ एक खास कौम से सम्बंधित होने के कारण अपनी जानें गंवानी पड़ी।

मीरी-पीरी के मालिक श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब

*-स. गुरदीप सिंघ**

जगत गुरु श्री गुरु नानक देव जी द्वारा प्रतिपादित मीरी-पीरी के सिद्धांत को व्यवहारिक रूप देने वाले दलि भंजन गुरु सूरमा सतिगुरु हरिगोबिंद साहिब के समूचे व्यक्तित्व को रूपमान करना कठिन प्रतीत होता है। भाई गुरदास जी ने अपनी पहली वार की अड़तालीसवीं पउड़ी में श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के बारे में लिखा है :

पंजि पिआले पंजि पीर
छठमु पीरु बैठा गुरु भारी।
अरजनु काइआ पलटि कै
मूरति हरिगोबिंद सवारी।
चली पीड़ी सोढीआ
रूपु दिखावणि वारो वारी।
दलि भंजन गुरु सूरमा
वड जोधा बहु परउपकारी ॥

'पंजि पिआले' से भाव है पांच शुभ गुण-- सत्य, संतोष, दया, धर्म, धैर्य। 'पंजि पीर'-- श्री गुरु नानक देव जी, श्री गुरु अंगद देव जी, श्री गुरु अमरदास जी, श्री गुरु रामदास जी, श्री गुरु अरजन देव जी। *"अरजनु काइआ पलटि कै मूरति हरिगोबिंद सवारी"* से भाव है कि श्री गुरु अरजन देव जी तथा श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब एक ही ज्योति के धारणी थे, मात्र शरीरों में ही अंतर था। *"दलि भंजन गुरु सूरमा वड जोधा बहु परउपकारी"* श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की प्रशंसा एवं विशेषताओं का प्रतीक है।

विश्व में हमेशा दो गुणों की ही प्रशंसा होती है-- सिमरन एवं राजनीतिक शक्ति। श्री गुरु अरजन देव जी ने प्रथम गुण को शिखर पर पहुंचा दिया था। गर्म तवी पर बैठकर भी शांत रहना एवं सिमरन करना, यह भक्ति की शिखर थी। इस कुर्बानी का सभी पर अमिट प्रभाव पड़ा। दूसरा गुण राज्य-शक्ति था। पहले गुण के कारण गुरु साहिब का बहुत सम्मान था तथा दूसरे गुण राजनीतिक शक्ति के कारण जनता मुगल सरकार के आगे झुकती थी। श्री गुरु अरजन देव जी चाहते थे कि लोग अत्याचार के सामने झुकने वाला अपना स्वभाव बदल लें, इसलिए उन्होंने श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को धार्मिक शिक्षा के साथ-साथ शस्त्र-विद्या का प्रशिक्षण भाई गुरदास जी तथा बाबा बुड्ढा जी के नेतृत्व में दिया। बाबा बुड्ढा जी ने श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को शस्त्र-विद्या में निपुण कर दिया।

सिक्खों के छठे गुरु श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का जन्म २१ आषाढ़, सं. १६५२ तद्नुसार १९ जून, १५९५ ई. को श्री अमृतसर के गांव वडाली में हुआ। इसी कारण इस गांव को अब 'गुरु की वडाली' कहा जाता है।

श्री गुरु अरजन देव जी ने लाहौर जाने के समय संगत में गुरिआई का उत्तरदायित्व श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को सौंप दिया था। उस समय श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की आयु ११ वर्ष थी। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने दो कृपाणें पहनीं--एक मीरी (सांसारिक प्रभुता) और दूसरी पीरी (आध्यात्मिक प्रभुता) की। इसका वर्णन ढाडी अब्दुल्ला ने इस प्रकार किया है :

दो तलवारां बद्धीआं

**३०२, किदवाई नगर, लुधियाना-१४१००८; मो. ९८८८१-२६६९०*

इक मीरी दी, इक पीरी दी।
इक अज़मत दी, इक राज दी,
इक राखी करे वजीर दी।

"गुरु-घर में दोनों शक्तियां--- आध्यात्मिक बल एवं राजनीतिक बल इकट्ठे ही कार्य करेंगे। अच्छा संत ही अच्छा सिपाही हो सकता है तथा अच्छा सिपाही ही अच्छा संत।" गुरु साहिब ने फरमाया कि आज से सिक्ख शस्त्र भी पहना करेंगे। सिमरन के साथ-साथ शस्त्र-अभ्यास भी होगा। आगे से हमारा धर्म एवं राजनीति एक साथ चलेंगे, लेकिन राजनीति धर्म के अधीन होकर चलेगी। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने गुरगद्दी को बादशाही तख़्त का भी रूप दे दिया। आप शस्त्र पहनकर, शीश पर बादशाहों जैसी कलगी सजाकर गुरगद्दी पर बैठते थे। जो सिक्ख शस्त्र या घोड़े भेंट करता गुरु जी उस पर बहुत प्रसन्न होते। उस सिक्ख को सिमरन के साथ-साथ शारीरिक शक्ति उत्पन्न करने की भी प्रेरणा दी जाती।

श्री हरिमंदर साहिब की दर्शनी ड्योढ़ी के सामने श्री अकाल तख़्त साहिब का निर्माण किया गया। भले ही श्री हरिमंदर साहिब और श्री अकाल तख़्त साहिब देखने में एक नहीं मगर मीरी-पीरी के सिद्धांत के अनुसार दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं। दोनों का संयुक्त और अलग-अलग दोनों तरह का महत्त्व है। श्री हरिमंदर साहिब सिक्खों का धार्मिक केंद्र है तो श्री अकाल तख़्त साहिब राजनीति का प्रत्यक्ष प्रमाण। वर्तमान समय में श्री अकाल तख़्त साहिब के प्रांगण में सुशोभित दो निशान साहिब मीरी-पीरी सिद्धांत के सुचेत पहरेदार हैं।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने भाई बिधीचंद जैसे शूरवीरों के कुशल नेतृत्व के अधीन नौजवानों के प्रशिक्षण का प्रबंध किया। इस प्रकार सिक्ख सेना की नींव रखी गई।

सच्चा पातशाह : आगरा में एक घसियारा सारे दिन की कमाई एक टका और गुरु जी के घोड़ों हेतु घास की गठरी लाया। एक साथ दो कैंप लगे देखकर वो भ्रम से जहांगीर के कैंप में चला गया। चोबदार ने रोका, लेकिन मुसाहिब ने कोई फरियादी समझकर अंदर जाने दिया। घसियारे ने जाते ही टका बादशाह जहांगीर के आगे रखा तथा घास की गठरी स्वीकार करने को कहा। फिर विनती की कि "मेरी लोक-परलोक में सहायता करनी!" जहांगीर ने जागीर प्रदान करने की बात कही तो घसियारे को महसूस हुआ कि वह तो गलत स्थान पर आ गया है। टका तथा गठरी उठाकर घसियारा साथ के कैंप में आ गया तथा श्रद्धापूर्वक गुरु जी के चरणों को पकड़ रो-रोकर क्षमा मांगने लगा कि "सच्चे पातशाह! मैं गलत दर पर चला गया था।" उधर जहांगीर पर इस घटना का गहरा प्रभाव पड़ा।

गुरु जी ने दोआबा क्षेत्र के गांवों में सिक्ख धर्म का प्रचार किया। करतारपुर के निकट कई पठानों ने स्वयं को गुरु जी को भेंट किया। पैंदे ख़ान भी इन पठानों में से एक था। उसके पश्चात गुरु साहिब मालवा क्षेत्र में गए। गांव डरोली में भाई साधू आपका सिक्ख बना। सन् १६१६ में आप जी कश्मीर गए। वहां पर गुरु जी ने दुखी लोगों की मदद की, जिससे प्रभावित होकर कई मुसलमान सिक्ख बने, जिनमें भाई कट्टू शाह का नाम प्रसिद्ध है। वापसी पर गुरु जी बारामूला के मार्ग गुजरात, वज़ीराबाद तथा हाफिज़ाबाद होते हुए श्री ननकाणा साहिब पहुंचे। फिर आप लाहौर आए। लाहौर में गिलटी (प्लेग) बुखार ज़ोरों पर था। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने अपने पिता जी की भांति लाहौर रहकर दुखियों की सेवा की। सन् १६१८ में गुरु जी वापिस श्री अमृतसर आ गए।

नज़रबंदी और रिहाई : पंजाब के लोगों में गुरु साहिब का प्रभाव बढ़ता अनुभव करते हुए मुगल बादशाह जहांगीर ने श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को ग्वालियर के किले में नज़रबंद कर दिया। गुरु जी के आने से किले का सारा वातावरण ही बदल गया। साईं मीयां मीर जी, जो कि हज़रत मोहम्मद साहब के खलीफा उमर की वंश में से थे, का मुसलमानों में बहुत प्रभाव था। साईं मीयां मीर जी का श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को नज़रबंदी से रिहा करवाने में बहुत बड़ा योगदान था। जब वज़ीर ख़ान श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की रिहाई का हुक्म लेकर ग्वालियर पहुंचा तो गुरु साहिब ने कैद अन्य बावन राजाओं की विनती स्वीकार करते हुए अकेले रिहा होने से इंकार कर दिया। बादशाह ने गुरु जी का दामन थामकर चलने वाले राजाओं को रिहा करने का आदेश दे दिया। गुरु जी ने बावन कलियों बाला खुला चोला बनवाया। सभी बावन राजा चोले की एक-एक कली को पकड़कर गुरु जी के साथ चलते हुए किले से बाहर निकल आए। इसी उपकार के कारण लोग गुरु जी को 'बंदी छोड़ दाता' कहने लगे।

बादशाह ने लाहौर आकर चंदू को मुज़रिम के तौर पर गुरु जी के सुपुर्द कर दिया। गुरु जी लाहौर पंहुचे। सिक्खों के दिलों में चंदू के लिए बहुत क्रोध था। अत: सिक्खों ने चंदू को बुरी स्थिति में सारे शहर में घुमाया। जब चंदू उस भठियारे के समक्ष आया, जिसको कभी चंदू ने श्री गुरु अरजन देव जी के पावन शीश पर गर्म रेत डालने हेतु मज़बूर किया था, तो चंदू को सामने देखकर वो अपने क्रोध पर काबू न पा सका। उसने वही कड़छा, जिससे गुरु साहिब के पावन शीश पर गर्म रेत डाली थी, चंदू के सिर पर मारा। चंदू की वहीं मृत्यु हो गई।

चार धूणे : श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के प्रयासों के कारण उदासी मत के चार बड़े साधु---बाबा अलमसत, भाई बालू हसना, भाई फूल शाह तथा भाई गोंदा सिक्ख मत के प्रचारक बन गए। इनके आगे सैकड़ों सेवक थे, जिन्होंने दूर-दूर तक सिक्खी की खुशबू को फैलाया। इनके प्रचार-केंद्रों को चार धूणे (धूनियां) कहा जाता है।

गुजरात में पीर दौला के साथ श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की मुलाकात हुई। गुरु साहिब की ठाट देखकर उसने चार प्रश्न किए :

औरत क्या और फकीरी क्या ?
हिंदू क्या और पीरी क्या ?
पुत्र क्या और वैराग क्या ?
दौलत क्या और त्याग क्या ?

गुरु साहिब ने उत्तर दिया :

औरत ईमान !
फकीर, न हिंदू न मुसलमान !
पुत्र निशान !
दौलत गुज़रान !

चार युद्ध : श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने मुगल सेनाओं के साथ चार युद्ध---श्री अमृतसर के निकट पिपली साहिब, श्री हरिगोबंदपुर (ज़िला गुरदासपुर), गुरूसर महिराज (ज़िला बठिंडा) तथा करतारपुर (ज़िला जलंधर) में लड़े तथा चारों में विजय प्राप्त की।

आप जी के पांच सुपुत्र-- बाबा गुरदित्ता जी, बाबा सूरज मल जी, बाबा अणी राय जी, बाबा अटल राय जी, श्री (गुरु) तेग बहादर जी तथा एक सुपुत्री---बीबी वीरो जी थी।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने गुरिआई अपने पौत्र बाबा गुरदित्ता जी के बेटे श्री (गुरु) हरिराय साहिब को सौंप दी। आप ६ चेत, सं. १७०१ तद्नुसार ३ मार्च, १६४४ ई को कीरतपुर साहिब (ज़िला रोपड़) में ज्योति-जोत समा गए।

संघर्ष का रास्ता : श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब

(शेष पृष्ठ ९ पर)

मानवता की प्रतिमूर्ति : श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब

*-डॉ. सुनील कुमार**

समय का दिव्य झूला कभी-कभी पृथ्वी की ओर झुक जाता है और अकस्मात ही किसी समहान विभूति को धरती पर छोड़ जाता है। कालान्तर में यही विभूति अपने महान कार्यों से संसार को चकित कर देती है। ऐसी ही महान विभूति थे श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब। जब इनकी आयु लगभग ११ वर्ष थी तब ये सिक्खों के छठे गुरु के रूप में गुरगद्दी पर आसीन हो गए थे। पिता जी की शहादत व मुगलों के अत्याचार ने इन्हें बाल्य-काल में ही परिपक्व बना दिया था। श्री गुरु अरजन देव जी की इच्छा थी कि श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब गुरगद्दी पर बैठकर लोगों को आध्यात्मिक ज्ञान के साथ-साथ सैनिक प्रशिक्षण देने की भी व्यवस्था करें। गुरगद्दी न मिलने के कारण इनके चाचा प्रिथी चंद ने कई षड़यंत्र रचे। परमात्मा की असीम कृपा से गुरु जी का बाल तक बांका नहीं हुआ।

आध्यात्मिक व राजनीतिक चिन्हों के रूप में गुरु जी ने एक मीरी की तथा एक पीरी की दो कृपाणें धारण कीं। वे पिता जी की शहादत से यह भली-भांति जान गए थे कि अत्याचारों का सामना राजनीतिक शक्ति से करना पड़ेगा। वे अपने अनुयायियों से अस्त्र-शस्त्र तथा घोड़े भेंट में लेते थे, ताकि आक्रमणकारियों का सामना करने के लिए एक मज़बूत व विशाल सेना बनाई जा सके। गुरु जी अपने इस पावन उद्देश्य में पूर्णत: सफल भी हुए। उनके समय में सिक्खों के प्रति मुगलों के मन में ईर्ष्या चरम सीमा पर थी। उन्होंने युद्ध केवल आत्म-रक्षा, धर्म व मानवता की भलाई के लिए लड़े। मुग़ल सम्राट जहांगीर उनकी वीरता व सैन्य-शक्ति से शंकित था। उसने गुरु जी को ग्वालियर के दुर्ग में बंदी बना लिया था। अंतत: जहांगीर को विवश होकर उन्हें रिहा करना पड़ा। इस घटना के पश्चात् लंबे समय तक श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब व जहांगीर के सम्बंध ठीक-ठाक रहे।

जहांगीर के बाद शाहजहां मुगल सम्राट बना। एक बार गुरु जी के सिक्खों व शाहजहां के समर्थकों के बीच एक बाज़ को लेकर झगड़ा हो गया। युद्ध हुआ। विजय गुरु जी के सिक्खों की हुई। शाहजहां ने गुरु जी की शक्ति को कुचलने की ठानी और फिर हमला कर गुरु जी को पकड़ लाने का आदेश दिया। गुरु जी के अनुयायियों ने हर बार बड़ी वीरतापूर्वक लड़ाई लड़ी और शाहजहां की सेना को परास्त कर दिया।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ईश्वर-पूजा की सभी सार्थक पद्धतियों का सम्मान करते थे। इनके समय में सिक्खों की संख्या में अभूतपूर्व वृद्धि हुई। गुरु जी एक बहुमुखी नेता, कुशल योद्धा तथा संत थे। उनके समय में सिक्खों ने अपार लोकप्रियता प्राप्त की और मुगलों के अत्याचारों से जनता की रक्षा की। अपने जीवन-काल में गुरु जी ने अनेक स्थानों की यात्राएं कीं। उन्होंने लंबे समय तक संत एवं सैनिक वाला जीवन बिताया और चार सफल लड़ाइयां लड़ीं।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने सभी प्रकार के सामाजिक अन्याय तथा भेदभावों की समाप्ति

**असिस्टेंट प्रोफ़ेसर, हिंदी विभाग, गुरु नानक देव विश्वविद्यालय, श्री अमृतसर-१४३००५, मो ९८७८५-५००३४*

पर ज़ोर दिया। वे मानते थे कि स्त्री मनुष्य की अंतरात्मा है। वे एक महान संगठनकर्त्ता व राजनीतिज्ञ थे तथा सदैव परिस्थिति के अनुसार निर्णय लेते थे। गरीब व जरूरतमंदों के प्रति उनके मन में अतिशय सहानुभूति थी। गुरबाणी का गायन करना उन्हें अति प्रिय था। गुरु जी ने समाज का रूप बदलने के लिए तथा लोगों में जन-शक्ति व रण-शक्ति जागृत करने के लिए प्रचारक जत्थे नियुक्त किए।

धर्म और राजनीति के सुमेल के लिए बाबा बुड्ढा जी और भाई गुरदास जी की सहायता से श्री अकाल तख़्त साहिब का निर्माण करवाया। युद्ध संबंधी उनका अपना नैतिक आचार था। उनकी राजनीति धर्म पर आधारित थी। अपनी जीवन-शैली द्वारा गुरु जी ने ऐसे मूल्य स्थापित किए जो आगे चलकर सिक्ख धर्म की संस्कृति व सभ्याचार का स्थायी हिस्सा बन गए। जनता की सुविधा के लिए अनेक शहरों, किलों, सरोवरों का निर्माण कराया तथा कुएं खुदवाए। श्री अमृतसर की सुरक्षा के लिए किला लोहगढ़ का निर्माण कराया। कीरतपुर साहिब को सैन्य दृष्टि से उपयुक्त स्थल बनाया। गुरु जी में राष्ट्रीयता की भावना कूट-कूटकर भरी हुई थी। उन्होंने धार्मिक व जातीय भेदभाव से ऊपर उठकर एक नये व स्वस्थ समाज-सृजन का काम किया। उनकी दृष्टि में मनुष्य मनुष्य में कोई भेद नहीं था। अपने पौत्र श्री (गुरु) हरिराय साहिब की साधुता व उनके गुणों को देखते हुए उन्हें अपना उत्तराधिकारी बनाया और स्वयं कीरतपुर साहिब जाकर रहने लगे। अपने जीवन के अंतिम दिन उन्होंने कीरतपुर साहिब में ही व्यतीत किए और वहीं परम ज्योति में लीन हो गए। सचमुच श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के विचार व कार्य आज भी ऐतिहासिक दृष्टि से उतने ही महत्त्वपूर्ण हैं और मानवता के लिए पथ-प्रदर्शक भी।

सहायक पुस्तकें:

- डॉ. अमृत कौर (रैणा), सिक्ख गुरुओं की शैक्षणिक देन (चंडीगढ़, यूनीस्टार बुक्स प्रा. लि. २००४)

- बलवंत सिंघ गुजराती, सिक्ख धर्म के दस गुरु (दिल्ली, राजपाल एण्ड संस, १९७२, द्वितीय संस्करण)

- शान्ता ग्रोवर, दस गुरु साहिबान (दिल्ली, एच. के. प्रकाशन, २००१)

- त्रिलोक सिंघ ज्ञानी, जीवन बिरतांत दस गुरु साहिबान (श्री अमृतसर, भाई जवाहर सिंघ क्रिपाल सिंघ एंड को, १९७५)

मीरी-पीरी के मालिक श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब

(पृष्ठ ७ का शेष)

आध्यात्मिक गुरु, योद्धा एवं परोपकारी थे। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ऐसी शख़्सियत थे जिन्होंने उस कठिन समय में कौम को हौसला देकर अपने पांव पर खड़ा किया जब विरोधियों को पूर्ण विश्वास था कि इस कौम की हस्ती मिट जायेगी। गुरु साहिब के सुयोग्य नेतृत्व में सिक्ख कौम केवल शक्तिशाली ही नहीं हुई, बल्कि युद्धों में विजय प्राप्त करके आम लोगों के दिलों में से शासकों तथा शासकों की सेनाओं का भय पूरी तरह से समाप्त कर दिया। आप जी के नेतृत्व ने सिक्ख इतिहास को एक नई दिशा दी। सिक्खों को यह बात समझ आ गई कि राज्य-शक्ति, सैनिक-शक्ति एवं धन-पदार्थों के अभिमानी लोग केवल शस्त्रबद्ध संघर्ष से ही सही मार्ग पर लाए जा सकते हैं। इस प्रकार 'संघर्ष की भावना' सिक्ख जीवन-जाच का अभिन्न अंग बन गई। यह भी गुरु जी की करामात थी, जिसका प्रभाव युगों-युगों तक रहेगा।

... छठमु पीरु बैठा गुरु भारी

-डॉ. नवरत्न कपूर*

जन्म एवं गुरु-पदवी की प्राप्ति : पांचवें सिक्ख गुरु श्री गुरु अरजन देव जी और उनकी धर्म-पत्नी माता गंगा जी ने श्री अमृतसर से आठ किलोमीटर की दूरी पर स्थित 'वडाली' नामक कसबे में १९ जून, १५९५ ई को जन्मे अपने सुपुत्र का नाम 'हरिगोबिंद' रखा। गुरगद्दी की प्राप्ति संबंधी उनके बड़े भाइयों के विरोध को देखकर और प्रिथीचंद एवं चंदू के बहकावे में आकर मुगल बादशाह जहांगीर ने श्री गुरु अरजन देव जी को दिन-प्रतिदिन तंग-परेशान करना शुरू कर दिया। भविष्यद्रष्टा पंचम पातशाह को कुछ ही दिनों में जब यह सुनिश्चित हो गया कि उनका सांसारिक जीवन-काल अब कुछ ही दिनों का है तो उन्होंने अपने एक विश्वसनीय सेवक बाबा बुड्ढा जी के द्वारा श्री (गुरु) हरिगोबिंद साहिब को अपना उत्तराधिकारी मनोनीत कर दिया। इस संबंध में भाई गुरदास जी का कथन है :

पंजि पिआले पंजि पीर छठमु पीरु बैठा गुरु भारी।
अरजनु काइआ पलटि कै मूरति हरिगोबिंद सवारी। *(वार १:४८)*

श्री गुरु अरजन देव जी ने अपने साहिबज़ादे श्री (गुरु) हरिगोबिंद साहिब को यह आदेश भी भेजा कि वे गुरगद्दी संभालते समय पूरी तरह शस्त्रधारी बनें और अपनी वित्त के अनुसार सेना भी रखें। पिता-गुरु द्वारा भेजे गए आदेश का पालन श्री (गुरु) हरिगोबिंद साहिब ने किया। बाबा बुड्ढा जी ने उन्हें दो कृपाणें पहनाकर गुरगद्दी पर बिठाया। गुरगद्दी पर विराजमान होने के बाद श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने अपने श्रद्धालुओं को संबोधित करते हुए कहा-- 'सिक्खो! ये दो कृपाणें 'मीरी और पीरी' की प्रतीक हैं। अब वक्त आ गया है कि संत-रूप के साथ-साथ बादशाह रूप भी अपनाया जाए, तभी धर्म की रक्षा वास्तव रूप में हो सकेगी।"

इसी परिप्रेक्ष्य में उन्होंने देग-तेग फ़तहि का नारा सिक्ख जगत को दिया, जिसका उल्लेख सुप्रसिद्ध इतिहासकार डॉ. हरीराम गुप्ता ने इस प्रकार किया है :-

"एक कृपाण राज्य-शक्ति की प्रतीक थी और दूसरी आध्यात्मिक शक्ति की; पहली दमनकारियों को कुचलने और दूसरी मासूमों के संरक्षण की। ... (गुरु साहिब द्वारा उच्चरित) 'देग' शब्द मित्रजनों के भोजन (लंगर) को सूचित करता था और 'तेग' शब्द शत्रुओं को दंडित करने के लिए सदा तैयार रहने का बोध करवाता था।" (One symbolized temporal power and the other spiritual power, one to smite the oppressor, the other to protect the innocent ... Their 'Deg' or meals for friends and 'Teg' or punishment for foes would always he ready.) [1]

गुरु साहिब के शाही ठाठ-बाठ : श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने मुगल साम्राज्य के बढ़ते हुए अत्याचारों और अपने पूज्य पिता श्री गुरु अरजन देव जी की शहीदी को देखते हुए आत्म-सुरक्षा के लिए बावन सिपाही अंगरक्षक के रूप में नियुक्त किए। उन्होंने सेना भी तैयार की,

**बी-१८०१, प्लाट नं. १०६, तुलसी सागर हाऊसिंग सोसाइटी, सेक्टर-१८, नेरूल, नवीं मुंबई-४००७०६, मो ०२२-२७७२९६९६*

जिसमें तीन सौ घुड़सवार और साठ तोपची भर्ती किए गए। ये घुड़सवार पंजाब के माझा, दुआबा और मालवा क्षेत्रों से संबंध रखते थे। लगभग दो सौ ऐसे घुड़सवार भी थे, जो कि स्वयंसेवी गुरु-सेवक थे। वे लोग दो समय के भोजन और छः मास के पश्चात् एक नई वर्दी मिलने से ही प्रसन्न रहते थे।[२] गुरु साहिब ने अपने श्रद्धालुओं को निर्देश दिया कि वे गुरु-घर को भविष्य में घोड़े और शस्त्र भी भेंट किया करें। उन्होंने श्री अमृतसर में एक क़िले का निर्माण करवाया, जिसका नाम 'लोहगढ़' रखा। उनका एक निजी झंडा (निशान साहिब) था। एक बड़ा नगाड़ा भी था, जो कि सूर्योदय तथा सूर्यास्त के समय बजाया जाता था। मुगल अधिकारी इन सभी चिन्हों को गुरु साहिब की राजनैतिक सज-धज मानते थे। मुसलिम इतिहासकारों ने उन्हें 'तेग़-ज़न' (तलवार के धनी) कहा है। गुरु साहिब ने आत्म-रक्षा हेतु मुगलों से चार युद्ध किए, जिनका स्थान और समय इस प्रकार है :

(१) श्री अमृतसर का युद्ध : सन् १६२८
(२) श्री हरिगोबिंदपुर का युद्ध : सन् १६३०
(३) गुरूसर महिराज का युद्ध : सन् १६३१
(४) करतारपुर का युद्ध : सन् १६३४

गुरु साहिब की धार्मिक-चेतना : श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने श्री अमृतसर के प्रसिद्ध गुरुद्वारा श्री हरिमंदर साहिब के सामने सन् १६०९ ई में एक तख़्त का निर्माण करवाया। यह पावन स्थान 'अकाल बुंगा' के नाम से विख्यात हुआ। समय पाकर यह श्री अकाल तख़्त साहिब के नाम से जाना जाने लगा। यहीं पर गुरु जी शाही पोशाक में सिंहासनारूढ़ होकर कुश्तियों और तीरंदाज़ी के मुकाबले देखते थे तथा एक सम्राट की भांति दोषियों को दंडित करते एवं शूरवीरों को सम्मानित करते थे। यहीं पर गुरु जी संगत को स्वयं वीरतापूर्ण घटनाएं सुनाया करते थे। उनके समय के ढाडी जत्थे भी वीर-रस-गाथाएं यहीं पर सुनाकर संगत को उत्साहित किया करते थे। इन ढाडियों में भाई अबदुल्ला, भाई बाबक और भाई नत्था के नाम प्रसिद्ध हैं।

सिक्ख धर्म में श्री अकाल तख़्त साहिब ही सिक्ख धर्म का पहला और सर्वोपरि 'तख़्त' (शौर्य-सूचक केंद्र) कहलाता है। श्री हरिमंदर साहिब में प्रचलित श्री गुरु ग्रंथ साहिब के पाठ और कीर्तन की परंपरा को भी श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने सुदृढ़ किया। इस तथ्य की तथा गुरु साहिब की मीरी-पीरी की उपमा की सार्थकता के बारे में डॉ. जीत सिंघ सीतल ने लिखा है :-

"आपके समय में श्री अमृतसर न केवल सिक्खों का धार्मिक केंद्र ही बना, बल्कि यह सिक्खों की सेना के मुख्य स्थल (सदर मुकाम) के रूप में भी बदल गया और 'हरिमंदर' अमृत सरोवर के साथ-साथ 'अकाल पुरख' (भगवान, निराकार रूप) का सच्चा तख़्त भी बन गया। अब छोटे-बड़े सभी गुरु साहिब के अधीन और आज्ञापालक बन गए, यथा :

हम अज़ फुकरो हम सलतनत नामवर
ब-फ़रमानि ऊ जुमला जेरो ज़बर। (भाई नंद लाल जी गोया)

वे (श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब) दरवेशी और बादशाही दोनों रूपों में प्रसिद्ध हुए। छोटे-बड़े सभी उनके आज्ञापालनकर्ता बन गए।"[३]

संदर्भ-सूची :-

1. Dr. Hari Ram Gupta, History of the Sikhs, page 156
2. M-Macaulifee, The Sikh Religion, vol.iii, page 5.
३. डॉ. जीत सिंघ सीतल, अंम्रितसर : सिफ़ती दा घर, पृष्ठ १०-११ (पंजाबी यूनिवर्सिटी, पटियाला)

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब द्वारा की गई जंगों का वर्णन

*-डॉ. जगजीत कौर**

सिक्ख धर्म के संस्थापक, जगत गुरु साहिब श्री गुरु नानक देव जी ने जिस निर्मल पंथ की स्थापना की वह स्वयं में ही एक क्रांति थी, एक परिवर्तन था, एक शांतिमय विद्रोह था; अन्याय असत्य, धक्केशाही, ज़ोर-जबरदस्ती और जुल्म के खिलाफ एक जंग थी। इसीलिए तो गुरु नानक पातशाह, जो *"सच की बाणी नानकु आखै सच सुणाइसी सचु की बेला"* के हिमायती बन अवतरित हुए थे, ने नारा बुलंद किया था :

जउ तउ प्रेम खेलण का चाउ ॥ सिरु धरि तली गली मेरी आउ ॥
इतु मारगि पैरु धरीजै ॥ सिरु दीजै काणि न कीजै ॥ *(पन्ना १४१२)*

जिस 'हलीमी राज' की नींव श्री गुरु नानक देव जी ने सच्चाई पर रखी थी, उसमें सत्य-धर्म के किले उसारे गए; आत्म बल के आधार पर ज्ञान की खड़ग हाथ में पकड़ाई गई और आत्म-ज्ञान के ज़ोर पर उस राज्य को सुरक्षित रखने की हिदायत की गई :

नानकि राजु चलाइआ सचु कोटु सताणी नीव दै ॥
लहणे धरिओनि छतु सिरि करि सिफती अंम्रितु पीवदै ॥
मति गुर आतम देव दी खड़गि जोरि पराकुइ जीअ दै ॥ *(पन्ना ९६६)*

विवेक-ज्ञान की खड़ग से ज़ालिमों की दुष्ट बुद्धि का नाश कर सत्य-धर्म के राज्य को परिपक्व किया जाये। जब दुष्ट बुद्धि ज्ञान, विवेक की सत्य शिक्षा से काबू न आए तो लौह निर्मित *"असि क्रिपान खंडो खड़ग"* का ही प्रयोग करना होता है। असीम परोपकारी, मानव-सेवा के पुंज, शांति, प्रेम, लोक-कल्याण के प्रतिरूप पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी को खुसरो का बहाना बना यासा दंड विधान नीति के तहत असीम कष्टकारी यातनाएं देकर शहीद किया गया, तो विचार-प्रणाली में परिवर्तन आया। *"तेरा कीआ मीठा लागै"*, अकाल पुरख वाहिगुरु के हुक्म के सामने नत्मस्तक हो, *"जैसी आगिआ कीनी ठाकुरि तिस ते मुखु नही मोरिओ ॥ सहजु अनदु रखिओ ग्रिहि भीतर उडि उआहू कउ दउरिओ ॥"* के साथ ही साथ शहीद शिरोमणि गुरुदेव जी ने अपने केवल ग्यारह वर्ष की आयु के *"दलि भंजन गुरु सूरमा"* सुपुत्र श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को मौजूद गुरसिक्खों के हाथ संदेश भेजा -- "सुपुत्र! सोग (शोक) नहीं मनाना, परिवार को गमगीन नहीं होने देना, धैर्य रखना, गुरगद्दी पर शस्त्रबद्ध होकर विराजमान होना, अपनी वित्त के अनुसार अधिक से अधिक फौज रखनी, गुरुता-गद्दी पर आसीन होकर पूर्व गुरु साहिबान के आचार-विचार-व्यवहार और रीति-रिवाज़ के धारणी बनना।" हुक्म अनुसार श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को गुरुता-गद्दी पर विराजमान कर दिया गया। उन्होंने दो कृपाणें पहनी, मीरी-पीरी के सिद्धांत की प्रतिष्ठा की। इस परिवर्तन की चर्चा हिंदोस्तान के तमाम आम और खास तथा गुरमति-प्रेमियों में प्रसारित हुई। 'गुर बिलास पातशाही छेवीं' के अनुसार गुरु जी ने घोषणा की :

**१८०१-सी, मिशन कम्पाऊंड, निकट सेंट मेरीज़ अकादमी, सहारनपुर (यू. पी.)-२४७००१; मो. ९४१२४-८०२६६*

सांति रूप हवै मैं रहों हरि मंदर कै माहि।
रजो रूप इह ठां रहों अकाल तखत सुखु पाइ ॥१०३॥

समाज पर मुगल सत्ता द्वारा लगाई गई सभी बंदिशों का बुलंदी से विरोध किया गया। आम जवानों को घोड़े की सवारी दी गई। गुरु जी के पास घोड़े भेंट होने लगे; जवान अपनी जवानियां भेंट करने आने लगे; उन्हें सैनिक प्रशिक्षण दिया जाने लगा; तलवारबाज़ी, नेजाबाज़ी, युद्ध-कला के दांव-पेच सिखाए जाने लगे; शारीरिक स्वस्थता के लिए मल्ल अखाड़े निर्मित हुए; अस्त्रों-शस्त्रों का भंडार एकत्रित किया गया और केवल चौदह वर्ष की अवस्था में गुरु जी ने १२ फुट ऊंचा तख़्त (श्री अकाल तख़्त साहिब) निर्मित कर उस पर राजसी ठाठ-बाठ, वेष-भूषा में विराजमान हो अपना दरबार लगाना शुरू कर दिया। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के बेखौफ साहस, अदम्य बल का प्रभाव समय के समाज पर यह पड़ा कि देखते ही देखते उनके पास सात सौ घोड़े, तीन सौ सवार और साठ तोपची हमेशा मौजूद रहते। माझा, मालवा और दोआबा क्षेत्र से पांच सौ जवान उनकी हजूरी में स्वयं को भेंट करने आ पहुंचे। इनमें भाई बिधीचंद, भाई पिराना, भाई जेठा, भाई पैड़ा और भाई लंगाह को गुरु जी ने सौ-सौ घुड़सवारों का कप्तान नियुक्त किया। पठानों की भारी संख्या गुरु जी की शरण में आई, जिनका मुखिया पठान पैंदे खां गुरु जी का भारी विश्वास-पात्र योग्य सिपाही बनकर रहा। गुरु जी ने इसे अस्त्र-शस्त्र-संचालन का प्रशिक्षण दिया। श्री अमृतसर नगर को सुरक्षित करने के लिए इसे चारों ओर से मज़बूत दीवार से घेर लिया गया। एक लोहगढ़ नामक किला भी नगर की बाहरी सीमा पर निर्मित किया गया। इससे सिक्खों में नया उत्साह और जोश पैदा हुआ।

इसी बीच गुरुदेव जी की सुपुत्री बीबी वीरो जी का विवाह भी निश्चित किया गया। विवाह की तैयारियां ज़ोर-शोर से होने लगीं। मिठाइयां, पकवान बनकर तैयार हुए, जिन्हें लोहगढ़ किले में रखा गया। इस उत्साह भरे माहौल में वीर बहादुर सिक्ख घूमते-घूमते, शिकार खेलते गुमटाला (श्री अमृतसर) के उस स्थान के निकट जा पहुंचे जो स्थान शाही हाकिमों के लिए विशेष था। यहां कुछ शाही हाकिम बाज़ तुड़वाने के खेल में लगे थे। सिक्खों को इस तरह आसमान में बाज़ छोड़ दूसरे बाज़ों को मरवाने की क्रीड़ा अच्छी नहीं लगी। उन्होंने अपना बाज़ छोड़ शाही बाज़ को तुड़वा कब्जे में कर लिया। शाही बंदों द्वारा बाज़ वापिस मांगने पर सिक्खों ने यह कहकर मना कर दिया कि शाही बाज़ का शिकार सिक्खों के बाज़ ने किया है। बात धमकियों तक जा पहुंची। सिक्ख भी अड़ गए। शाही फौज ने बात पंजाब के गवर्नर कुलीज खां के पास पहुंचाई। कुलीज खां ने बढ़ा-चढ़ाकर मसला बादशाह शाहजहां तक पहुंचाया और उससे सिक्खों पर हमला करने की आज्ञा ले ली। कुलीज खां ने अपने फौजदार मुखलिस खां को सात हज़ार सवार देकर श्री अमृतसर की ओर रवाना किया।

श्री अमृतसर की (पहली) जंग : गुरु जी यह बात जानते थे कि एक न एक दिन टक्कर होनी है, पर अभी इतनी जल्दी वे इसके लिए तैयार नहीं थे। इधर बीबी वीरो जी का विवाह था, बरात भी श्री अमृतसर के लिए चल पड़ी थी। गुरु जी द्वारा बरात को झबाल गांव भाई लंगाह के घर पहुंचने का आदेश दे परिवार को भी वहीं भेज दिया गया। किला खाली कर दिया गया, सिवाय शादी की मिठाइयों के कुछ न छोड़ा गया। सिक्खों में लड़ने-जूझने का उत्साह अति उच्च दर्जे का था। पहली बार दबे-कुचले

लोगों को मौका मिला था। सदियों तक ज़ालिमों का अत्याचार सहने वाले लोग अपने अधिकार के लिए शाही फौज का सामना करने जा रहे थे। सिक्खों के पास असले में तोपें-बंदूकें भी पूरी नहीं थीं। दूसरी ओर मुखलिस खां, समस खां, अनवर खां, सैय्यद मुहम्मद अली और सुलतान बेग जैसे तजुर्बेकार फौजदार थे। सिक्खों में जोश था। भाई बिधीचंद, भाइ मोहन, भाई गुपाला, भाई तिलोका, भाई अनंता, भाई निहाला, भाई नंदा, भाई पिराणा, भाई भाना, भाई नवलू और भाई जैतो जैसे दिलेर सूरमे थे। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने अपने अदम्य साहस, शूरवीरता और बौद्धिक सूझबूझ के द्वारा युद्ध की ऐसी योजना बनाई कि एक दिन तो मुगल फौज किले को तोड़ने में ही लगी रही। वो किले को हासिल करने में लगी रही और सिक्ख उस पर घमासान तीरों की बौछार करते रहे, उसे मारते रहे। महाकवि भाई संतोख सिंघ के शब्दों में :

मचिओ लोहगढ़ जंग इम भइओ शबद बिकराल।
मनहु भाड़ दाना भुजे तड़ तड़ भई बिसाल ।

गुरु साहिब ने पेड़ के तने के खोखल को ही तोपचा बना लिया। उसमें से पत्थरों की भारी मार मुगलों पर पड़ने लगी। नगाड़े पर लगातार चोटें पड़ने लगीं। इतना शोर-शराबा और पत्थरों की वर्षा, मुगल फौज को कुछ समझ नहीं आ रहा था। इस तरह के युद्ध के वे आदी नहीं थे। उनके पैर उखड़ने लगे। सिक्खों की कहीं कृपाणें चमकीं, कहीं कटार के वार हुए, कहीं तीरंदाज़ी, कहीं नेज़ों के प्रहार। ऐसे में पहले दिन का युद्ध खत्म हुआ। दूसरे दिन अत्यंत घमासान युद्ध हुआ। भाई भाना ने युद्ध की कमान संभाली। बहादुरी से लड़ते हुए वे पिपली साहिब के पास शहीद हुए। सिक्ख इतिहास के वे पहले फौजी शहीद हैं। अब गुरु जी ने स्वयं कमान संभाली। उनके तीरों से कोई भी बच के नहीं जा सका :

गुरू बान छोरे। चले बेग घोरे। जिसे जाइ लागे। तबै प्रान तिआगै ॥

पांच हज़ार सवारों के मध्य गुरु साहिब अकेले ही तूफानी चाल से तीर चला रहे थे है :

पंच हजार परे ललकार तुरंगनि मारि कै रारि मचाई।
चेत बिखै जिमि मेघ घटा बनि तीरन की बरखा बरखाई।
सूर खरे जिमि खेत पकिओ इक बार ही मरि कै भूम गिराई।
तीर गुरू के समीर बहै दल फाट गइओ नहीं धीरज पाई ॥

गुरुदेव जी के तीरों का खास निशाना मुखलिस खां बना। उसके सिर के दो टुकड़े हो गए। मुखलिस खां के ज़मीन पर गिरते ही शाही फौज भाग खड़ी हुई। वो लाहौर की ओर भागी। सिक्खों ने जै-जैकार की। उनके उत्साह, जोश और प्रसन्नता का प्रवाह उमड़ पड़ा। जीत के नारे बुलंद हुए। लगातार नौ घंटे चलने वाली इस जंग में अनेकों सिक्ख शहीद हुए। गुरुदेव जी ने प्रेम सहित सिक्खों के मुख पोंछकर प्यार सहित सबका एक साथ लोहगढ़ किले के अंदर दाह-संस्कार किया।

यह जीत कोई साधारण जीत नहीं थी। परिस्थितियों के संदर्भ में सिक्खों की इस पहली ऐतिहासिक जीत का मूल्यांकन करें तो पता चलता है कि लगभग आठ-दस सदियों से लगातार जिल्लत, गुलामी और अपमानपूर्ण जीवन जी रहे लोग आज नृशंस, ज़ालिम, आततायी शासन-सत्ता के सामने सिर उठाकर गर्व से जीने की प्रेरणा प्राप्त कर रहे थे। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब अदम्य शूरवीर का प्रखर व्यक्तित्व ढाल बनकर उनके सामने खड़ा था। प्रसिद्ध इतिहासकार डॉ. हरीराम गुप्ता गुरु साहिब को भारत के छः सौ सालों के इतिहास में पहला

राष्ट्रीय फौजी नायक मानता है --"First nation of military hero of the people of Punjab in six hundred years since the conquest of Punjab by Muslim." *(History of Sikhs Vol.I P.155)*

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने इतिहास का स्वरूप बदलकर रख दिया। इस जीत का महत्त्व इस दृष्टि से कितना अद्वितीय है कि उन्होंने उस मुगल साम्राज्य से टक्कर ली जो उस समय राजसी सत्ता-शक्ति के चरम शिखर पर था। सिक्ख उस समय अत्यंत अव्यवस्थित, उखड़े, बिखरी अवस्था में थे; सैनिक प्रशिक्षण की अभी बाल्यावस्था में थे। उनके पास था तो केवल जोश, उत्साह, गुरु के नाम पर लड़ने-मरने की अदम्य लालसा। एक भी सिक्ख न हतोत्साहित हुआ, न डिगा, न डोला। सिक्ख इतिहास में यह युद्ध एक महत्त्वपूर्ण मील का पत्थर है। अधिकांश विद्वान इस युद्ध का समय मई, १६२९ ई. मानते हैं।

श्री हरिगोबिंदपुर जी जंग : श्री हरिगोबिंदपुर नामक नगर में सिक्खों और शाही फौज के बीच फिर भिड़ंत हुई। यह दूसरा युद्ध था। श्री अमृतसर के युद्ध के बाद गुरु जी कुछ दिन करतारपुर रहे। फिर श्री हरिगोबिंदपुर आ गए। यहां पास में ही ब्यास नदी बहती थी; स्थान भी कुछ ऊंचा था। सुरम्य स्थान देख गुरु जी ने यहीं नगर बसाना चाहा। यहां का मालिक घोरड़ हिंदू था जो अड़ गया कि नगर नहीं बसेगा, स्थान खाली कर दिया जाये। गुरु जी ने प्यार से समझाया, पर वह उल्टा अनाप-शनाप बोलने लगा। वह कुछ बदमाश ले आया। इस पर सिक्खों को क्रोध आ गया और एक ने उसका सिर काट ब्यास में बहा दिया। उसका पुत्र रतन चंद था, जो चंदू के भाई लाल चंद का सम्बंधी था। चंदू का बेटा करम चंद भी इसके साथ जलंधर में था। यहां के सूबेदार अब्दुल्ला खां ने मुहम्मद खां, ख़ान बलवंड, अली बख़्श जैसे प्रसिद्ध तोपची व तीरंदाज़, दो-दो हज़ार तगड़े जवान दिए। इमाम बख़्श शस्त्र-विद्या का माहिर अपने पुत्र नबी बख़्श और करीम बख़्श के साथ दो-दो हज़ार कुल १५ हज़ार सेना ले चढ़ आया। गुरु जी भी तैयार थे। भाई जट्टू, भाई कलिआण, भाई नानू, भाई पिरागा, भाई मथरा, भाई जगना तथा भाई परसुराम और भाई सकतू (दोनों भाई) ये सभी तकड़े तीरंदाज़, साहसी, बलवान वीर थे। ये सभी शत्रुओं पर ऐसे टूट पड़े मानो ये ('गुर प्रताप सूरज ग्रथ', अंसू ३१, रास ६ के अनुसार) खाने की मिठाइयां, जलेब, सकरपारे, गुलकंद आदि हों। भाई जट्टू और मुहम्मद खां, भाई मथरा और बैरम खां भिड़े। बैरम खां के दहाड़ कर मुंह खोलते ही भाई मथरा जी ने उसके मुंह में कटार घुसेड़ दी। वो ज़मीन पर जा गिरा। भाई कलिआण ने बलवंड खां को धराशायी किया। अली बख़्श और इमाम बख़्श को भाई नानू ने पार बुला दिया।

दूसरे दिन इकट्ठा धावा बोला गया। करम चंद को भाई बिधीचंद ने गुरु-चरणों पर ला पटका। गुरु जी ने निहथे दुश्मन को बख़्श दिया। अब्दुल्ला के दोनों पुत्र-- नबी खां और करीम बख़्श मारे गए। करम चंद, रतन चंद और अब्दुल्ला तीनों एक साथ गुरु जी से आ भिड़े। सीधी टक्कर में गुरु जी ने तीनों को ज़मीन पर ला पटका। मैदान गुरु जी के हाथ लगा। सिक्खों ने जैकारे गजाए; फ़तहि हासिल हुई। सितंबर, १६२९ ई. की यह दूसरी जंग भी जीती गई। प्रो. करतार सिंघ इस जंग का समय संवत, १६८७ (सन् १६३०) मानते हैं।

महिराज की जंग : कुछ दिन श्री हरिगोबिंदपुर टिक गुरु जी श्री अमृतसर, डरोली रह मालवा की ओर सिध्वा सुधार पहुंचे। यहां काबुल से

संगत गुरु-दर्शन को आई। इनमें भाई बख़्त चंद और भाई तारा चंद ने बताया कि काबुल के प्रेमी भाई करोड़ी ने गुरु जी के लिए दो घोड़े--- दिलबाग और गुलबाग भेजे थे, पर शाही कर्मचारियों ने लाहौर के पास छीन लिए। अब घोड़े बादशाह के अस्तबल में बंधे हैं। गुरु जी ने भाई बिधीचंद को थापड़ा दे घोड़े खोल लाने का आदेश दिया। भाई बिधीचंद पहला घोड़ा दिलबाग घसियारे का वेश धारण कर ले आए और दूसरी बार ज्योतिषी का वेश बना, अस्तबल की पिछली दीवार से छलांग लगा रावी नदी पार कर घोड़े समेत गुरु-दरबार में आ पहुंचे। आते-आते बुलंद आवाज़ में बता आए कि "मेरा नाम बिधीचंद है। मैं श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का सिक्ख हूं। सच्चे पातशाह के घोड़े सच्चे पातशाह के पास पहुंचा रहा हूं।" बादशाह शाहजहां सिक्खों का यह साहस व दिलेरी सुन आग-बबूला हो उठा। उसने करम बेग और लला बेग को दस हज़ार शाही फौज देकर हमला करने को रवाना किया।

गुरु जी जानते थे कि जंग होगी। उन्होंने भी तैयारी की। यद्यपि राय जोध पहाड़ी राजे ने अपना किला पेश किया, पर गुरु जी ने बरनाला-बठिंडा मार्ग पर महिराज नामक रेतीले स्थान को चुना। बीच में अकेला पानी का स्रोत। एक टिब्बी के चारों ओर सेनाबंदी कर ली गई। केवल चार हज़ार फौज थी। रेतीले इलाके में धक्के खाता लला बेग नथाना पहुंचा। उसने हसन खां को गुप्त सूचना लेने भेजा जो सिक्खों के हाथ आकर खूब पिटा। गुरु जी ने उसकी जान बख़्श दी। सिक्खों की तैयारी व गुरु जी की उदारता देखकर उसने लला बेग को न लड़ने की सलाह दी। वे दोनों जल-भुन उठे। उसे चाबुक मार-मार पटक दिया। फौज लेकर आ चढ़े । सर्दियों के दिन, भयंकर हवा-तूफान, आंखों में उड़-उड़कर रेत पड़ रही थी, पीने को पानी नहीं, असला-रसद भी देर से पहुंचे। सिक्खों को इस क्षेत्र की पहचान थी। पानी-रसद पर्याप्त थी। सिक्खों ने शाही फौज को घेर लिया। लला बेग और करम बेग सामने होकर गुरु जी को ललकारने लगे। गुरु जी ने उन पर तीरों की अंधाधुंध वर्षा की। भाई जोध शाह ने कमर बेग को ऐसी मार मारी कि वो बेहोश हो गिरा। गुरु जी ने लला बेग पर तेग से ऐसा वार किया कि उसका शरीर दोफाड़ हो गिरा। दोनों के गिरते ही शाही फौज भाग खड़ी हुई। मैदान सिक्खों के हाथ लगा। जै-जैकार के नारे गूंजने लगे।

गुरु जी के १२०० सिक्ख शहीद हुए। करम बेग, लला बेग के साथ काबली खान, सुमस खां, कासम बेग, गुल बेग, इसमाईल खां, बहलोल खां भी तकड़े फौजदार मारे गए। इधर भाई बिधीचंद, भाई जैतो और भाई राय जोध ने कमाल की बहादुरी, चुस्ती, फुर्ती दिखाई। गुरु जी ने प्रशंसा की। गुरु जी के शरीर पर कई जख़्म आए, जो बाद में ठीक हो गए। प्रिं. सतिबीर सिंघ युद्ध का समय सन् १६३१ और अन्य १६३५ ई मानते हैं, पर यह तो सभी मुक्त कंठ से मानते हैं कि सिक्खों ने अत्यंत वीरता व साहस का प्रदर्शन किया। उनकी युद्ध-कला निखरी हुई थी। मोर्चाबंदी की योजना अति संगठित थी। इतिहासकार मुहम्मद लतीफ सिक्खों की प्रशंसा करते हुए कहता है कि शाही फौज अपने फौजदार मरवा लाहौर की ओर भागी। सिक्खों से करारी हार हुई। शहीद सिक्खों की याद में यहां सरोवर कायम कर, कांगड़ा और कीरतपुर साहिब कुछ दिन ठहरकर गुरु जी करतारपुर आ गए। यहां श्री गुरु तेग बहादर साहिब का विवाह माता गुजरी जी के साथ हुआ। इसी समय सिक्खों और मुगलों की

बीच चौथे जंग का एलान हो गया। इसका कारण पैंदे खां बना।

करतारपुर की जंग : पैंदे खां बचपन में गुरु-दरबार में आया था। गुरु जी ने उसे पाल-पोस कर युद्ध-कला सिखाई। बाद में वह अहंकारी हो गया। अपने दामाद के बहकावे में आ गुरु-विरोधी हो गया। गुरु जी ने दरबार से निकाल दिया तो दामाद उसमान खां को ले जलंधर के फौजदार कुतुब खां की अगुवाई में शाही फौज ले करतारपुर पर आ चढ़ा। गुरु साहिब ने तीर के वो करतब दिखाए कि आधी शाही फौज तो वहीं धराशायी हो गई। पैंदे खां घबराया और कहा कि एक-एक बहादुर अकेला लड़ेगा। उसे अपनी तलवारबाज़ी पर घमंड था। उसने गुरु जी पर तलवार का ज़ोरदार वार किया। गुरु जी ने अपनी ढाल पर ऐसा रोका कि उसकी तलवार के दो टुकड़े हो केवल मूंठ ही उसके हाथ में रही। वो डरकर गुरु जी के घोड़े के नीचे घुसा घोड़ा पलटाने के इरादे से। गुरु जी ने उसके सिर पर ढाल से ही इतनी ज़ोर का वार किया कि वो बेहोश होकर गिर पड़ा। गुरु जी ने कहा, "पैंदे खां! कलमा पढ़! तेरा अंत समय आ गया है।" वो गुरु जी के पैर पकड़ बोला, "आपके हाथों मरना ही मेरा कलमा है। आपकी ढाल ही मेरा कलमा है।" गुरु जी दयार्द्र हो उठे। उनकी आंखों में आंसू आ गए। मरते पैंदे खां को अपनी ढाल से धूप की तेजी से छाया की। भाई संतोख सिंघ के शब्दों में :

सिपर साथ कीनसि तब छाया।
होत बदन पर घाम मिटाया।
देखत खरे अशरु द्रिग झरै।
पैद खान कु मुख पर परे ॥

(अंसू २८, रास ८)

इस तथ्य की पुष्टि मैकालिफ़ ने भी की है कि अपने पुराने साथी की मौत पर गुरु साहिब के नेत्रों से आंसू बह चले। *(Sikh Religion, Vol. iv, P. 209)*

पैंदे खां के मरते ही काले खां क्रोधित हो गुरु जी के सामने आ खड़ा हुआ। उसने ज़ोरदार वार गुरु जी पर किया जिसे उन्होंने ढाल पर रोक कहा, "तलवार ऐसे नहीं, ऐसे चलाई जाती है" और एक वार में ही उसका सिर धड़ से अलग कर दिया। काले खां के सिर के दूर जा गिरते ही फौज में भगदड़ मच उठी। सब भागने लगे। मैदान सिक्खों के हाथ लगा। इस जंग में केवल १४ वर्ष की आयु के श्री गुरु तेग बहादुर साहिब ने तलवार के वो करतब दिखाए कि गुरु जी ने प्रसन्न होकर कहा, "अब तुम्हारा नाम तिआगमल नहीं, तेग बहादुर है।" माता गुजरी जी करतारपुर महल की छत पर खड़ी हो सिक्खों के जौहर देख रही थीं। इस जंग की कमान श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने खुद संभाली थी। सिक्खों ने बहादुरी के खूब जौहर दिखाए थे। इतिहासकार मुहसिन फानी ने खुद आंखों से यह युद्ध देखा था। वह गुरु जी की प्रशंसा करते नहीं थकता कि कैसे पैंदे खां की मौत पर वे उदास हुए; कैसे काले खां को तलवार चलानी सिखाई। वह गुरु जी की जीत का कारण उनका सहज-शांत स्वभाव मानता है। गुरु जी कभी गुस्से में नहीं आते थे और न गुस्से में तलवार चलाते थे।

गुरु जी जब करतारपुर से कीरतपुर साहिब की ओर जा रहे थे तो फगवाड़ा के निकट पलाही गांव में शाही फौज की एक टुकड़ी (अब्दुल्ला खां के बेटे अहमद खां) ने अचानक हमला किया जिसे श्री गुरु तेग बहादर साहिब और अन्य सिक्खों ने बहादुरी से सामना कर भगा दिया। उसके बाद लंबे समय तक सिक्खों की ताकत के सामने शाही फौज ने आने का साहस नहीं किया। ۞

दो तलवारां बद्धीआं इक मीरी दी इक पीरी दी

*-डॉ. अमृत कौर**

श्री गुरु अरजन देव जी की शहीदी एक ऐसी युगांतकारी घटना थी जिसने सिक्ख धर्म और इतिहास को एक नया मोड़ प्रदान किया। श्री गुरु अरजन देव जी का अंतिम पैगाम अपने सुपुत्र श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को सशस्त्र गुरगद्दी पर बैठने का था। श्री गुरु अरजन देव जी ने समय की मांग को देखते हुए श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब और उनकी आयु के अन्य लड़कों को शस्त्रों की सिखलाई दिलवानी शुरू कर दी थी। गुरु जी ने उन्हें भाई गुरदास जी और बाबा बुड्ढा जी के सुपुर्द किया, जिन्होंने उन्हें आध्यात्मिक शिक्षा के साथ-साथ शस्त्र-विद्या में भी निपुण किया। तेग चलाना, तीर-अंदाज़ी, घुड़सवारी, नेज़ाबाजी आदि की उन्हें शिक्षा प्रदान की। श्री गुरु अरजन देव जी की शहीदी के समय गुरु जी की आयु केवल ग्यारह वर्ष की थी। पिता-गुरु की शहीदी एक ऐसा मील-पत्थर सिद्ध हुई जिसने श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के मन में एक संकल्प पैदा किया कि अब प्रत्येक सिक्ख संत-सिपाही बनेगा, जिसके हाथ में कृपाण भी होगी। उन्होंने दो कृपाणें पहनकर गुरगद्दी ग्रहण की। ये कृपाणें मीरी और पीरी की थीं जो सांसारिक और आध्यात्मिक शक्ति की प्रतीक थीं। ढाडी अबदुल्ला के अनुसार :

दो तलवारां बद्धीआं इक मीरी दी इक पीरी दी।

इक अज़मत दी, इक राज दी, इक राखी करे वजीर दी।

अपने इस महान व्यक्तित्व के कारण गुरु जी सिक्ख कौम को शैक्षणिक, सैनिक, सामाजिक, धार्मिक और आर्थिक क्षेत्र में मार्गदर्शन देने के समर्थ हुए और निराशा के भंवर में डूबे लोगों को शक्तिशाली और निडर बना दिया। मुगल बादशाह जेहाद के नाम पर नि:संकोच अमानवीय अत्याचार करते और यातनाएं देते थे। साधारण जनता इसको चुपचाप सहन कर लेती थी। उसमें अपने आत्म-सम्मान की रक्षा करने की सामर्थ्य नहीं थी। गुरु जी ने संत-सिपाही स्वरूप के अनुसार सैनिक-शिक्षा को जीवन-प्रणाली का अभिन्न अंग बनाकर इतिहास का मुंह मोड़ दिया।

एक सुदृढ़ व शक्तिशाली कौम का निर्माण करने के लिए गुरु जी अपना अधिकांश समय कुश्ती लड़वाने, घुड़सवारी करने, गतका खेलने, शिकार करने, तीर से निशाना साधने आदि में व्यतीत करते। उन्होंने सिक्खों को आदेश दिया कि वे घोड़े और शस्त्र भी भेंट-स्वरूप लेकर आएं। पहले श्री हरिमंदर साहिब में कीर्तन करने वाले, गुरबाणी सुनने वाले, कथा करने-सुनने वाले साध-जन आते थे, अब श्री अकाल तख़्त साहिब के परिसर में ऐसी संगत जुड़ने लगी जो घुड़सवारी करने, कुश्ती करने, शस्त्र चलाने आदि का अभ्यास करती, ताकि मज़बूत और ताकतवर शरीरों का सृजन हो सके; सिक्खों को सिपाही का स्वरूप भी दिया जा सके। गुरु जी इन अभ्यासों में स्वयं भी भाग

**१५४, ट्रिब्यून कॉलोनी, बलटाना, जीरकपुर-१४०६०४ (पंजाब), मो. :९८१५१-०९९५७*

लेते। वे तीरंदाज बड़े ज़बरदस्त थे। संत-सिपाही के संकल्प को रूपमान करने के लिए जहां गुरबाणी व्याख्यान दिए जाते वहीं हथियारों की सिखलाई और झूठे मुकाबलों की लड़ाइओं द्वारा सिक्खों को सैनिक सिखलाई भी दी जाती। कहा जाता है कि गुरु जी ने चुने हुए ५२ वीर सैनिक अपने पास रखे हुए थे, जो सिक्खों को शस्त्र-विद्या सिखलाते थे। एक मत के अनुसार गुरु जी के पास ८०० घोड़े, ३०० घुड़सवार और ६० बंदूकधारी जवान थे। कीरतपुर साहिब की पहाड़ियां सैनिक सिखलाई के लिए अत्यंत उपयुक्त स्थान थीं।

सैनिक सिखलाई के क्रियात्मक ढंगों द्वारा श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने हारे हुए लोगों की सुप्त शक्तियों को जागृत कर उन्हें मृत्यु के भय से रहित, निडर योद्धा, मज़बूत इरादों वाले सिपाही बना दिया। आत्म-सम्मान के लिए मर मिटने वालों के एक नए इतिहास का सृजन हुआ। बहादुर और बलवान सैनिकों को तैयार करना, जो नि:स्वार्थ भावना से लड़ सकें, जान हथेली पर रखकर देश की सुरक्षा और अपने स्वाभिमान की रक्षा कर सकें, उनकी शिक्षा का उद्देश्य बन गया। गुरु जी ने सिक्ख लहर को क्रांतिकारी बना दिया। देखते ही देखते हज़ारों की संख्या में घुड़सवार, सैनिक तैयार हो गए। माझा, मालवा, दुआबा क्षेत्र के हज़ारों नौजवान गुरु जी की फौज़ में भर्ती हो गए। अत्याचारी शक्तियों के विरुद्ध जूझते हुए मानवता की रक्षा के लिए यह आंदोलन सफल सिद्ध हुआ। सैनिक सिखलाई के लिए उचित वातावरण के सृजन के लिए, दिलों में जोश भरने के लिए गुरु जी ने संगीत और साहित्य का सहारा लिया। उनके दरबार में प्रसिद्ध रागी-ढाडी बाबक, जस दरीआउ, सोधा, दित, नत्था, अबदुल्ला आदि अपने मनोहर कीर्तन-वारों द्वारा संगत को मंत्र-मुग्ध कर देते। ढाडियों को गुरु जी ने वीरता-भरपूर वारें गाने का आदेश दिया।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने जन-शक्ति और रण-शक्ति दोनों को जागृत करने के लिए प्रचारक जत्थे नियुक्त किए। भाई जेठा जी, बाबा गुरदित्ता जी, बाबा अलमसत जी, भाई फूला जी, भाई गोंदा जी, भाई बालू जी प्रमुख प्रचारक थे। बंगाल, उड़ीसा में भाई बिधीचंद जी, काबुल (अफगानिस्तान) में भाई तिलका जी, कश्मीर में भाई कट्टूशाह जी के नाम इज्जत से लिए जाते हैं। सरकार की ओर से गैर-मुसलमानों को धर्म प्रचार की मनाही थी। पांच-पांच की मंडली बनाकर सिक्ख रात को प्रचार के लिए निकलते। इनके एक हाथ में मशाल होती, एक में डंडा। इनके पीछे संगत कीर्तन करती जाती। ये लोगों को समझाते-- "डरो नहीं! प्रभु अंग-संग है। धर्म की रक्षा के लिए तैयार रहो! गुरु जी को शस्त्र और जवानियां (नौजवान) भेंट करो।" प्रत्येक गांव में एक जत्था तैयार होता और प्रचार के लिए दूसरे गांव में चला जाता। इस प्रकार सैकड़ों जत्थे तैयार हो गए, जो गांव-गांव घूमकर जन-शक्ति को जागृत करते। इन जत्थों, बैठकों को चौंकीआं भी कहा जाता था। हमारी दैनिक अरदास "चौंकीआं, झंडे युगो-युग अटल" तथ्य पर आधारित है।

जन-शक्ति के जागरण का काम थोड़े समय में ही इतना शक्तिशाली बन गया कि इसके धमाके मुगलों के गलियारों में सुनाई देने लगे। चंदू शाह श्री गुरु अरजन देव जी की शहीदी के बाद भी शांत नहीं बैठा। अब वह श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के विरुद्ध जहांगीर के कान भरता कि "गुरु जी ने श्री अमृतसर में

एक 'तख़्त' का निर्माण किया है। लोग उन्हें सच्चा पातशाह कहते हैं। उन्होंने फौज तैयार कर ली है।" इसके फलस्वरूप जहांगीर ने गुरु जी को ग्वालियर के किले में कैद कर लिया।

अब किला कैदखाना न रहा, राजनीतिक गतिविधियों का केंद्र बन गया। जन-शक्ति-जागरण का आह्वान हुआ। धीरे-धीरे पंजाब के सम्पूर्ण गांवों में चौंकीआं निकलने लगीं। श्री अमृतसर में बाबा बुड्ढा जी प्रात:-सायं दोनों समय चौंकी निकालते। संगत ग्वालियर तक जाने लगी। गुरु जी की कैद के विरुद्ध सम्पूर्ण पंजाब में विरोध उत्पन्न हो गया। नूरजहां और साई मीयां मीर के बल देने पर जहांगीर ने गुरु जी को रिहा करना स्वीकार कर लिया, क्योंकि उसे डर पैदा हो गया था कि सम्पूर्ण सिक्ख कहीं बगावत न कर दें। गुरु जी ने अपने साथ ५२ पहाड़ी राजाओं को भी छुड़वाया और परोपकारी पातशाह 'बंदी छोड़ सतिगुरु' कहलाए।

श्री अकाल तख़्त साहिब का निर्माण जुल्म को स्पष्ट चुनौती थी। धर्म और राजनीति का सुमेल हो गया। इसके निर्माण के द्वारा सिक्खों की राजनीतिक पहचान कायम हो गई।

डॉ. हरी राम गुप्ता के अनुसार, "सिक्ख कौम ने मुगल स्टेट के अंदर अपनी स्टेट कायम कर राजनीतिक उन्नति का मार्ग तैयार किया। गुरु जी तख़्त साहिब पर बैठकर दरबार लगाते, राजनीतिक-सामाजिक-आर्थिक समस्याओं का समाधान करते।... गुरमते और हुकमनामे श्री अकाल तख़्त साहिब से ज़ारी किए जाते। यह रिवायत आज तक कायम है।"

अपनी शक्ति और अपने स्वाभिमान की रक्षा के लिए गुरु जी ने राज्य-सता के विरुद्ध चार युद्ध किए। इन चारों में उन्हें विजय प्राप्त हुई। इस विजय ने लोगों की मानसिकता को बदल दिया। अपने आत्म-सम्मान और स्वतंत्रता को कायम रखने के लिए उन्हें सिर हथेली पर रखकर लड़ना सिखाया। गुरु जी ने मृत:प्राय लोगों में नवीन प्राणों का संचार किया। आत्म-सम्मान के लिए मर मिटने वालों के नए इतिहास का सृजन हुआ। ज़ालिम-अत्याचारी राज्य-सत्ता के चंगुल से धर्म और देश को स्वतंत्र कराने का आंदोलन शुरू हुआ। युद्ध संबंधी उनका नैतिक आचार था कि गिरे हुए, शस्त्रहीन, बालक, बूढ़े, शरणार्थी और स्त्री पर वार नहीं करना। युद्ध में सफलता प्राप्त करने के लिए उन्होंने धर्म को कभी हाथ से नहीं छोड़ा। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का सम्पूर्ण जीवन सिक्खों को सैनिक रूप से संगठित करने और शिक्षित करने में व्यतीत हुआ।

सहायक सामग्री :

१. डॉ. भगवंत सिंघ, जन साहित, भाषा विभाग, पंजाब--- श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब विशेष अंक, जून-जुलाई, १९९५, पृष्ठ १८.

२. डॉ. त्रिलोचन सिंघ, गुरु तेग बहादर, दिल्ली सिक्ख गु. प्र. कमेटी, दिल्ली, पृष्ठ १७

३. डॉ. हरी राम गुप्ता, हिस्टरी ऑफ सिखस, भाग-१, पृष्ठ १३४.

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब

*-डॉ. रछपाल सिंघ**

'मीरी' का अर्थ है-- 'बादशाहों जैसा शाही ठाठ-बाठ' और 'पीरी' का अर्थ है -- 'संत मत' अर्थात् 'फकीरी'। श्री गुरु अरजन देव जी ने लाहौर जाने से पहले श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को गुरगद्दी का वारिस एलान कर दिया था। उस समय गुरु पातशाह की आयु १० साल १० माह के लगभग थी।

२८ ज्येष्ठ, संवत् १६६३ तद्नुसार २५ मई, १६०६ ई को बाबा बुड्ढा जी ने श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को गुरगद्दी पर बिठाने की रस्म अदा की। श्री गुरु अरजन देव जी के किए शस्त्रबद होने के वचन के अनुसार छठम पातशाह श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने बाबा बुड्ढा जी के पावन कर-कमलों से दो कृपाणें पहनीं। इसका वर्णन ढाडी नत्था और अबदुल्ला ने इस प्रकार किया है :

दो तलवारां बद्धीआं इक मीरी दी, इक पीरी दी।
इक अज़मत दी, इक राज दी, इक राखी करे वजीर दी।

इस दिन से गुरु-घर में 'संत-बल' और 'राज-शक्ति' दोनों इकट्ठा काम करने लगे। गुरु जी के हुक्म अनुसार, "आज से सिक्ख शस्त्र भी पहना करें। नाम-सिमरन और गुरबाणी-चिंतन के साथ-साथ शस्त्र-अभ्यास भी जरूर किया करें।" इस प्रकार छठे पातशाह श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने दुनिया को एक नया सिद्धांत देकर धर्म और राजनीति के इकट्ठेपन की नींव रखी। गुरु जी ने सिक्ख संगत को बढ़िया घोड़े और बढ़िया शस्त्र लाने को कहा।

गुरु जी ने श्री अकाल तख़्त साहिब की सृजना की। श्री अकाल तख़्त साहिब प्रभु, वाहिगुरु, अकाल पुरख जी का तख़्त है। यह युगो-युग अटल है, नाश रहित है, सदीवी है।

श्री अकाल तख़्त साहिब की सृजना में किसी राज मिस्त्री ने हाथ नहीं लगाया। इसकी सेवा गुरु जी ने माननीय बाबा बुड्ढा जी और भाई गुरदास जी जैसे नाम-बाणी के रसिए, गुरु-घर के अनन्य सेवकों द्वारा करवाई। गुरु जी श्री अकाल तख़्त साहिब पर हर रोज दीवान सजाते थे। रागी, ढाडी और भट्ट गुरु-घर की महिमा 'वारां' गाकर सिक्ख संगत को गुरु-इतिहास से अवगत कराते थे। सिक्ख संगत में धर्म-युद्ध की तैयारी के लिए वीर रस पैदा किया जाता था। इस पावन स्थान पर बैठकर ही गुरु जी सिक्ख संगत के धार्मिक-सामाजिक मसलों का निपटारा किया करते थे।

धर्म और राज्य-शक्ति दोनों ही सिक्ख धर्म में एक साथ मिलकर चलते आ रहे हैं। श्री अकाल तख़्त साहिब पर सभी फैसले अथवा गुरमते सर्व-सम्मति से होते आए हैं। अगर कहीं पंथक फैसले सर्व-सम्मति से करने में कोई कठिनाई महसूस होती तो पांच सिंघ साहिबान की अगुआई में दोनों धड़ों के हक में पर्चियां लिखकर एक डिब्बे में डाल दी जाती थीं। फिर अरदास कर उनमें से एक पर्ची निकाली जाती थी। जिसकी पर्ची निकल आती, उसी के पक्ष में फैसला हो जाता था। इस फैसले को गुरु-हुक्म समझकर प्रवान कर लिया जाता था।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की सूझ-बूझ एवं बुद्धि इतनी तीक्ष्ण थी कि वे लोगों के लेन-देन,

**पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, क्षेत्रीय खोज केंद्र, गुरदासपुर (पंजाब)-१४३५२१*

ज़मीनों अथवा घरेलू कलेश के झगड़े, ईर्ष्या, चुगली, मारपीट आदि के मामले पल भर में ही हल कर देते थे। बहुत से गैर-सिक्खों के झगड़े भी शाही कचहरियों में जाने कम हो गए। गुरु साहिब के दरबार में लोग निष्पक्ष फैसले सुनकर संतुष्ट होते थे।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने समूची मानवता को नेक इंसान बनने, नाम-सिमरन और गुरबाणी के साथ प्रीति पैदा करने, ज़ालिमों, अत्याचारियों और भ्रष्ट ताकतों का निर्भय होकर सामना करने, गुरु-हुक्म की कमाई करने, समूची मानवता को एक लड़ी में पिरोकर रखने, गरीबों-ज़रूरतमंदों का मददगार बनने, बदी और नाइंसाफी का डटकर मुकाबला करने का संदेश दिया। मीरी-पीरी के मालिक श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की महिमा अकथ्य है, अपरंपार है, अगाध-बोध है।

कविता

छठम पातशाह

माता गंगा जी और गुरु अरजन देव जी के घर जन्म पाया।
प्रिथी चंद ने बार-बार षड्यंत्र रचा, मारने का प्रयास दोहराया।
विपरीत परिस्थितियों में पंचम गुरु जी का आदेश पाकर,
बाबा बुड्ढा जी ने भक्ति के साथ शक्ति का पाठ पढ़ाया।
शहीदों के सरताज गुरु अरजन देव की शहादत के बाद,
११ वर्ष की छोटी आयु में ही, गुरगद्दी का उपहार पाया।
अध्यात्म के साथ राजनैतिक बल की आवश्यकता को देख,
मीरी-पीरी की दो कृपाणें धारण कर राज्य चलाया।
गुरबाणी-कीर्तन के साथ वीर रस काव्य व्याख्यान हुआ।
अनेक युवाओं ने तन, मन, धन अर्पण करने का प्रण लिया।
भाई बिधीचंद जी, भाई जेठा जी, भाई पिआरा जी,
और भाई लंगाह जी जैसे योद्धाओं ने युवकों का नेतृत्व किया।
सरबत्त खालसा व गुरमता जैसे सिद्धांतों की,
मानवतावादी सोच को बढ़ावा दिया।
ठीक श्री हरिमंदर साहिब के सामने,
श्री अकाल तख़्त साहिब का स्थापन किया।
मुगल बादशाह जहांगीर के आमंत्रण पर,
विमार-विचर्श कर दिल्ली जाने का निर्णय लिया।
जहांगीर से मुलाकात करने के पश्चात्,
उसके साथ ही आगरा की ओर प्रस्थान किया।
अपने बाहुबल का प्रदर्शन करते हुए,
गुरु जी ने जब शेर का शिकार किया।
अपके शक्तिशाली व्यक्तित्व से भयभीत होकर,
जहांगीर ने आपको ग्वालियर के किले में कैद किया।
जेल में मिलने वाले भोजन को,
गुरु साहिब ने लेने से इंकार किया।
और गुरसिक्खों की नेक कमाई का,
भोजन खाना सहर्ष स्वीकार किया।
बादशाह को जब अपनी गलती का एहसास हुआ।
गुरु साहिब की रिहाई का उसने हुक्म जारी किया।
अपने साथ ५२ राजा भी बंधन से आज़ाद करवाये।
तभी से छठम पातशाह 'बंदी छोड़ दाता' कहलाए।

-श्री सुरजीत दुखी, ३३२/९, गली जट्टां, अंदरून लाहौरी गेट, श्री अमृतसर--१४३००१; मो: ९९१४५३१२२१

श्री गुरु अरजन देव जी

-डॉ परमजीत कौर*

श्री गुरु अरजन देव जी की शहादत को, याद कर रहा है संसार सारा।
सांझीवालता के लिए हुए शहीद, कारण है यह बहुत न्यारा।
जाति-बिरादरी वाले लोगों में, बराबरी का एहसास जगाया।
सत्य, सेवा, सिमरन की बात पर, सबको अपना बनाया।
मालवे-दुआबे के लोगों को, सखी-सरवरियों के जाल से छुड़ाया।
जहां देखी पानी की कमी, कुएं-सरोवरों का निर्माण करवाया।
भारी अकाल पड़ा जब लाहौर में, मुर्दों से गली-बाज़ार भर गये।
सपरिवार वहां पहुंच कर, अनथक सेवा में, आठ माह व्यस्त रहे।
परोपकार किए इतने कि हर वर्ग में लोकप्रिय हुए।
सिक्ख-लहर बनी लोक-लहर, कीर्तिमान कुछ बने नये।
जब सत्य का झंडा बुलंद होता है, झूठ कांप जाता है।
स्वयं को शक्तिशाली समझने वालों का, विरोध बढ़ जाता है।
कट्टर मुसलमानों व उच्च जातीय ब्राह्मणों के, खेमे में हलचल हुई।
कान भरे गये अकबर के पर, चाल यह भी व्यर्थ गई।
शेख़ अहमद सरहंदी तथा फरीद बुखारी ने, राह दूसरा अपनाया।
गुरु जी का प्रचार बंद हो, इस शर्त पर जहांगीर को राजा बनाया।
बागी खुसरो को पनाह देने का इल्जाम लगा, गुरु जी को लाहौर बुलाया।
प्रिंथीचंद ने साथ लेकर चंदू को, बादशाह को और भी भड़काया।
यासा के अधीन यातनायें देने का, हुक्म देकर जहांगीर सिंध रवाना हुआ।
लाहौर निवासियों के दिलों का 'बादशाह', उनके ही शहर में शहीद हुआ।
अपने इन मनसूबों को जहांगीर, तुजके-जहांगीरी में बयां कर गया।
सिक्खों के हाथों में माला के साथ-साथ, शमशीर पकड़ा गया।
ज्येष्ठ महीना, गर्म रेत, तपती तवी, गुरु जी के इरादे को डिगा न पाया।
भाणा मानने का पाठ पढ़ा सिक्खों को, जुल्म से टकराना सिखाया।
आपका व्यक्तित्व मानवता, भाईचारे, एकता का, प्रतीक बन गया।
सिक्खी के महल की मज़बूत हुई नींव, शहीदियों का खुला अध्याय नया।
सोये हुए मन को जगाकर हमें, गुरमति-जीवन-राह पर चलना है !
गुरु जी की शहादत को श्रद्धा-सुमन अर्पित कर, कोटि-कोटि नमन करना है !

*६२०, गली नं. १, छोटी लाइन, संतपुरा, यमुनानगर (हरियाणा)-१३५००१, मो. ९८१२३-५८१८६

श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब : जीवन परिचय

-डॉ. मनजीत कौर*

दरसन ते संकट नसहि पग परसन सुख दाइ।
जन हरसन सरसन सदा श्री हरिक्रिशन सुभाइ।

महाकवि भाई संतोख सिंघ ने बाला प्रीतम, नूरे-आलम श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब की उच्चात्मिक अवस्था को बयान करते हुए कितना सार्थक लिखा है कि उनके दर्शन मात्र से शारीरिक दुख दूर हो जाते थे; उनके चरणों के ध्यान मात्र से समस्त कलेश, संताप और पीड़ा मिट जाती थी। वस्तुत: यहां उम्र का तकाज़ा नहीं, क्योंकि ज्योति श्री गुरु नानक देव जी की ही थी। सेवा की प्रतिमूर्ति, नाम की शक्ति के आधार पर पांच वर्ष की अल्पायु में इतने गहन उच्च पद की प्राप्ति विश्व-इतिहास की विलक्षण घटनाओं में से है। तभी तो उनकी आत्मिक अवस्था एवं महिमा को कलगीधर पातशाह श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने 'श्री भगौती जी की वार' में इस पावन सार्थक पंक्ति में दर्ज किया है जिसे अत्यंत श्रद्धा-भावना से हर कोई श्री गुरु नानक-नाम-लेवा सिक्ख हर रोज़ अरदास में स्मरण करता है :

श्री हरिक्रिशन धिआईऐ जिस डिठे सभि दुखि जाइ ॥

बाला प्रीतम श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब का जन्म सातवें गुरु श्री गुरु हरिराय साहिब के घर माता किशन कौर जी की पावन कोख से कीरतपुर साहिब (ज़िला रोपड़) में ८ सावन, सं. १७१३ तद्नुसार ७ जुलाई, १६५६ ई. को हुआ।

श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब के बड़े भ्राता रामराय द्वारा औरंगजेब के दरबार में करामात दिखाने और श्री गुरु ग्रंथ साहिब की पंक्ति बदलने की गुस्ताखी के फलस्वरूप पिता श्री गुरु हरिराय साहिब ने अत्यंत रोष में आकर उसको आजीवन अपने समक्ष न आने का आदेश दे दिया। अपने योग्य छोटे सुपुत्र बाला प्रीतम को सवा पांच वर्ष की अल्पायु में ही गुरगद्दी सौंप दी। श्री गुरु हरिराय साहिब के आदेशानुसार गुरु साहिब के ज्योति-जोत समाने के अगले ही दिन ७ अक्तूबर, १६६१ ई. को गुरुता-गद्दी पर श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब को विराजमान कर दिया गया।

रामराय का विरोध तथा औरंगजेब को शिकायत करना : अपने छोटे भाई को गुरगद्दी मिलने के फलस्वरूप रामराय आग बबूला हो गया। उसने धीरमल आदि से सलाह-मशविरा करके कुछ मसंदों को अपने साथ मिला लिया और स्वयं गुरु बन बैठा। सिक्खों ने उसे गुरु नहीं माना तो उसने औरंगजेब के पास जाकर शिकायत की कि गुरगद्दी पर ज्येष्ठ पुत्र होने के नाते मेरा हक बनता है, यह हक मुझे दिलवाने में मेरी मदद करो। औरंगजेब ने जयपुर के राजा जय सिंह के हाथ श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब को निमंत्रण-पत्र भेजा। साथ ही दिल्ली की संगत ने भी गुरु जी के दर्शन की अभिलाषा जाहिर की। दर्शन की अभिलाषी संगत यह भी चाहती थी कि गुरु साहिब यहां आकर रामराय की चालों से भी संगत को सुचेत करें।

औरंगजेब का निमंत्रण-पत्र पाकर गुरु साहिब ने जहां पिता जी की आज्ञा को शिरोधार्य करते हुए औरंगजेब से न मिलने का प्रण दोहराया, वहीं दूसरा पत्र संगत का पाकर स्वयं

*२/१०४, जवाहर नगर, जयपुर-३०२००४, मो: ९९२९७-६२५२३

को न रोक सके और अगले ही दिन बहुत सारी संगत तथा परिवार के साथ दिल्ली के लिए प्रस्थान किया।

अंबाला के पंजोखरा में पंडित लाल चंद का अभिमान चूर-चूर करना : गुरु साहिब के साथ मार्ग में बहुत-सी सिक्ख संगत जुड़ती गई। जब गुरु साहिब पंजोखरा पंहुचे तो वहां का पंडित लाल चंद अत्यंत अहंकारी लहजे में गुरु साहिब के पास आकर बोला कि "स्वयं को श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब कहलवाते हो; श्री कृष्ण ने गीता की रचना की है, आप गीता के अर्थ करके बताओ!" गुरु साहिब ने बड़ी सहजता से उत्तर दिया, "हम अर्थ करें तो कौन-सी बड़ी बात होगी? आप जाओ और जिसे चाहो गांव से बुला लाओ, हम उसी से इसके अर्थ करवा देते हैं।" पंडित लाल चंद की खुशी का ठिकाना न रहा। मन में यह विचारते हुए कि आज शास्त्रार्थ में गुरु जी को हरा दूंगा, उसने छज्जू झीवर, जो कोरा अनपढ़ था, उसे गुरु साहिब के समक्ष ला खड़ा किया। श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब की कृपा-दृष्टि पाकर छज्जू पंडित से बोला, "पूछो पंडित जो पूछना है!" पंडित लाल चंद ने गीता के सबसे कठिन पदों का उच्चारण किया और उनके अर्थ करने को कहा। गुरु-कृपा से छज्जू झीवर ने तुरंत उनके सुंदर अर्थ कर दिये। पंडित लाल चंद का सारा अभिमान चूर-चूर हो गया और वह गुरु-चरणों में नत्मस्तक हो गया, साथ ही गुरु-घर का श्रद्धालु प्रचारक भी बना।

राजा जय सिंह के बंगले में गुरु साहिब के आत्मिक ज्ञान की परख : मार्ग में संगत को ईश्वरीय प्रेम का पावन संदेश देते हुए गुरु साहिब दिल्ली में राजा जय सिंह के बंगले में पहुंचे। वहां गुरु जी का संगत द्वारा अत्यंत श्रद्धापूर्वक आदर-सत्कार किया गया। दिल्ली की संगत वहां जुड़ती गई और सतसंग के प्रवाह चलने लगे।

औरंगजेब ने भी गुरु साहिब के दर्शन की अभिलाषा प्रकट की, लेकिन गुरु साहिब ने इंकार कर दिया। अगले दिन औरंगजेब ने अपने पुत्र को गुरु साहिब के दर्शनार्थ भेजा। गुरु साहिब ने उसे आत्मिक उपदेश दिया। दृढ़तापूर्वक अपने प्रत्येक प्रश्न का तसल्लीबख़्श उत्तर पाकर औरंगजेब का बेटा जब अपने पिता को उस वार्तालाप के बारे में बताता है तो औरंगजेब को भी यकीन हो जाता है कि वास्तव में यही (गुरु जी) गुरगद्दी के असली वारिस हैं। फिर भी उसने राजा जय सिंह द्वारा उनके आत्मिक ज्ञान की परख करनी चाही। औरंगजेब के ही कहने पर राजा जय सिंह गुरु साहिब को अपने महल में ले गया, जहां उसकी रानी व दासियों ने एक जैसे वस्त्र पहने हुए थे। गुरु साहिब उन सब में बैठी रानी को पहचानकर उनके पास जा बैठे। राजा जय सिंह की पूरी तसल्ली हो गई। इसकी ख़बर औरंगजेब तक भी पहुंच गई।

गुरु साहिब से मिलने की औरंगज़ेब की तीव्र इच्छा : श्री गुरु हरिराय साहिब के औरंगजेब से न मिलने के आदेश का पालन गुरु जी ने दृढ़ता से किया। जब औरंगजेब ने अपने छोटे शहजादे को गुरु साहिब के पास भेजा तो गुरु जी ने अपने निश्चय को दोहराया। उसके पत्र लिखने के निवेदन को स्वीकारते हुए श्री गुरु नानक देव जी की बाणी 'माझ की वार' का यह सलोक लिख भेजा :-

किआ खाधै किआ पैधै होइ ॥ जा मनि नाही सचा सोइ ॥ (पन्ना १४२)

इस पत्र को सिक्ख इतिहास का पहला 'जफ़रनामा' कहा जाता है। *(पुस्तक 'गुर दरीआउ, पृष्ठ ८५ से साभार)*

सिक्ख इतिहास गवाह है कि औरंगजेब से मिलने के निमंत्रण को गुरु जी ने बार-बार ठुकराया। ऐसा कोई नहीं जो समय के बादशाह

के मिलाप को ठुकरा दे, पर श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब ने ऐसा कर दिखाया :

आज जगत महि कोइ न ऐसे।
हित करि शाह हकारहि कैसे?
इन के सम एही इक अहै।

(श्री गुरु प्रताप सूरज ग्रंथ, अंसू ४१)

हुकमनामे जारी करना : गुरु साहिब ने अल्पावस्था में ही अनेक विवेकशील एवं दृढ़तापूर्ण फैसले किए, हुकमनामे जारी किए, तंबाकू निषेध उपक्रम चलाया। कन्या की हत्या करने वालों एवं तंबाकू का उपयोग करने वालों के साथ रोटी-बेटी का संबंध न रखने का आदेश दिया।

दिल्ली में फैली महामारी से रोगियों को मुक्त करना : इस दौरान दिल्ली में चेचक की महामारी के फैलने पर गुरु जी रोगियों की दिन-रात सेवा करते रहे। रोग के भयावह रूप व पानी की कमी को देखते हुए गुरु साहिब ने (गुरुद्वारा बंगला साहिब वाले स्थान पर) एक चौबच्चा बनवाया और उसमें जल भरवा दिया।

योग्य उत्तराधिकारी का चुनाव : श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब ने लगभग ढाई वर्ष तक अल्पावस्था में ही गुरुता-गद्दी की महान जिम्मेदारी को अत्यंत सुझबूझ एवं दृढ़ता से निभाया। औरंगजेब जैसे समय के क्रूर बादशाह की भी परवाह न करते हुए गुरगद्दी हेतु अत्यंत गंभीरतापूर्वक योग्य उत्तराधिकारी का चयन किया। रोगियों की सेवा करते हुए अंतिम समय स्वयं भी इसी रोग से ग्रसित हो गए। परम ज्योति में विलीन होने से पूर्व संगत को प्रभु-सिमरन से जोड़ते हुए एलान किया--"बाबा बकाले!" यह वचन कहकर गुरु जी ३ वैशाख, संवत् १७२१ तद्नुसार ३० मार्च, १६६४ ई को ज्योति-जोत समा गए। यमुना नदी के किनारे आपके पावन शरीर का दाह संस्कार किया गया। यहां पर आजकल 'गुरुद्वारा बाला साहिब' सुशोभित है।

गुरु जी की उच्च और महान करनी अकथनीय है। उन्होंने छोटी अवस्था में महान कार्य कर दिखाए। गुरबाणी के आशयानुसार :

ऐसे गुर कउ बलि बलि जाईऐ आपि मुकतु मोहि तारै ॥ (पन्ना १३०१)

गुरु साहिब के प्रकाशोत्सव को आज भी सिक्ख जगत में सेवा-दिवस के रूप में मनाया जाता है।

कविता

गुरमति ज्ञान पत्रिका

गुरमति ज्ञान पत्रिका बड़ी ही प्यारी है।
ज्ञान की हमें तो यह लगती पिटारी है।
संपादकीय है सदा स्वच्छ आईना इसका,
तसवीर जिससे स्पष्ट होती सारी की सारी है।
इतिहास का सार है इसमें
संगीत की झंकार है इसमें
गुरबाणी के सहज अर्थ इसमें
कविताओं की महक है इसमें
गुरसिक्खी का सिद्धांत इसमें
नारी का सम्मान है इसमें
अतीत का झरोखा इसमें
वर्तमान का विचार है इसमें
भविष्य को संवारने की बस, अब करनी तैयारी है।
गुरमति ज्ञान पत्रिका बड़ी ही प्यारी है।
विशेष अंक समय-समय पर निकलते।
कई समस्याओं के समाधान जिनसे मिलते।
पूरे देश में फैला उजास इसका,
हिंदी प्रांत वालों हेतु सौगात न्यारी है।
संपादन-मंडल व लेखकों की भव्य टीम इसकी,
बधाई की पात्र टीम सारी की सारी है।
कोटि-कोटि शुक्राना परवरदिगार तेरा,
तेरी रहमत से ही जग में शान इसकी न्यारी है।
गुरमति ज्ञान पत्रिका बड़ी ही प्यारी है।
ज्ञान की हमें तो यह लगती पिटारी है।

श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब के जीवन-कार्य

*-डॉ. कशमीर सिंघ 'नूर'**

सिक्खों के आठवें गुरु श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब के जीवन-कार्यों के बारे में कुछ लिखने से पहले उनके जीवन के बारे में जान लेना ज़रूरी है। ये बालरूप में ही गुरगद्दी पर विराजमान हुए थे तथा बाल्यावस्था में ही इन्होंने वे महान कार्य किए, जिन्हें देख तत्कालीन समाज दंग रह गया था। इनकी शोभा सुनकर और आभा देखकर बड़े-बड़े ज्ञानी, पंडित, राजा व महाराजा इनके आगे नत्मस्तक होते तथा इनके दर्शन करने के बाद सुख-शांति प्राप्त करते थे।

श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब का जन्म ८ सावन, संवत् १७१३ तद्नुसार ७ जुलाई, सन् १६५६ को कीरतपुर साहिब में पिता श्री गुरु हरिराय साहिब के गृह में माता किशन कौर जी की कोख से हुआ। ये बालपन से ही धार्मिक प्रवृत्ति के थे। बेशक इनका बड़ा भाई रामराय गुरगद्दी पर बैठने की आशा लगाए बैठा था, परंतु श्री गुरु हरिराय साहिब ने इन्हें ही गुरगद्दी के योग्य समझा, क्योंकि रामराय जल्दी क्रोधित हो जाता था और उसमें धैर्य, हौसले, संतोष, दया-भाव, सेवा-भाव की भी कमी थी। वो ईर्ष्यालु स्वभाव का भी था। श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब दृढ़ इच्छा-शक्ति व हौसले के स्वामी थे; दयालु भी थे और सेवा-भावी एवं नम्रता के पुंज भी। वे शांतचित्त व एकाग्रचित्त होकर गुरबाणी का पाठ किया करते थे। श्री गुरु हरिराय साहिब का सिक्खों को आदेश था कि जो कोई रामराय के माथे लगेगा, वह सिक्ख नहीं और जो श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब के दर्शन करेगा, उसके सारे दुख दूर हो जाएंगे। उनके बारे में अति सुंदर शब्दों में वर्णन किया हुआ पढ़ने को मिलता है : *"बाल बैस ब्रिध गिआन महि समरथ श्री गुरदेव। पद् अरविंदनि बंदना मुकति पाय जिन सेवा।"* अर्थात् बाल्यावस्था में बालक अचेत (अबोध) तथा निर्बल होता है और किसी (सेवक) को स्वतंत्र रूप से कुछ देने में असमर्थ होता है, परंतु श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब तीनों कमज़ोरियों से रहित हैं। वे ज्ञान-वृद्ध हैं, परम समर्थ हैं और सेवकों पर कृपा करने वाले हैं।

केवल सवा पांच वर्ष की बाल्यावस्था में गुरु जी ने गुरगद्दी की जिम्मेदारी अक्तूबर, १६६१ ई में संभाल ली। दूसरी तरफ उनके बड़े भाई रामराय ने स्वयं को गुरु घोषित कर दिया। सिक्खों को श्री गुरु हरिराय साहिब का आदेश याद था। उन्होंने रामराय को गुरु मानने से इंकार कर दिया।

श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब के जीवन-कार्य : रामराय ने श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब के विरुद्ध निजी प्रचार-अभियान जारी कर दिया। गुरु जी की परीक्षा लेने हेतु उसने पंडित भी भेजे। गुरु जी के इर्द-गिर्द काफ़ी संगत इकट्ठी होती थी। गुरु जी जब पंजोखरा (ज़िला अंबाला) में थे तब रामराय द्वारा भेजे गये एक अहंकारी पंडित लालचंद ने पूछा कि ये कौन हैं? उसे बताया

**बी-एक्स ९२५, मुहल्ला संतोखपुरा, हुशियारपुर रोड, जलंधर-१४४००४; मो. ९८७२२-५४९९०*

गया कि ये श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब हैं। उसने कहा कि "नाम तो श्री कृष्ण वाला है! क्या ये गीता का सार बता सकते हैं?" गुरु जी ने किसी भी पुरुष को लाने के लिए कहा, ताकि पंडित की तसल्ली, संतुष्टि हो जाए। पंडित लालचंद छज्जू नामक अनपढ़ व्यक्ति को ले आया। गुरु महाराज ने भाई छज्जू की ओर कृपा भरी दृष्टि से देखा और उसे गीता के अर्थ समझाने के लिए कहा। भाई छज्जू ने सारी संगत में गीता के अर्थ करके बताए तथा पंडित लालचंद की तसल्ली करवाई। पंडित लालचंद ने उसी वक्त गुरु-चरणों में शीश झुकाया और पक्षपात व अहं छोड़कर नम्रता को धारण किया।

इतिहासकार मगेगर का कहना है कि रामराय ने बादशाह औरंगज़ेब के समक्ष फ़रियाद की कि बड़ा बेटा होने के नाते गुरगद्दी पर उसी का अधिकार है। उसे न्याय दिलाया जाये और फ़रमान भेजकर श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब को दिल्ली के दरबार में बुलाया जाए। रामराय यह भूल गया था कि गुरु-घर में बड़े-छोटे का ख़्याल नहीं किया जाता, व्यक्ति के व्यक्तित्व को सद्‌गुणों के तराजू में तौला जाता है।

श्री गुरु हरिराय साहिब ने परम ज्योति में विलीन होते समय श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब को कह दिया था कि औरंगज़ेब के सामने कदापि नहीं जाना और न ही किसी की धमकियों की परवाह करनी। उसी गुरु-आदेश की रौशनी में श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब ने औरंगजेब के पास जाने से इंकार कर दिया। मिर्ज़ा राजा जय सिंह ने गुरु जी से कहा कि वे औरंगज़ेब से न मिलें, उसके बंगले में आ जाएं तथा संगत को दर्शन देकर निहाल करें। (वह जगह, जहां गुरु जी ठहरे, अब गुरुद्वारा बंगला साहिब के नाम से प्रसिद्ध है।)

ज्ञानी गिआन सिंघ के कथनानुसार गुरु जी ने कहा, "हम राजा (जय सिंह) के प्रेम के कारण चले हैं, परंतु बादशाह को दर्शन नहीं देंगे।" ऐसा दर्शाते हुए वे दिल्ली में गए और राजा जय सिंह के घर में ठहरे। उनके साथ माता किशन कौर जी, भाई दरगाह मल जी, भाई मती दास जी, भाई दिआला जी, भाई गुरदित्ता जी, भाई सती दास जी और मसंद भाई गुरबख़्श मल भी थे। शेष सिक्खों को गुरु जी ने साथ चलने से मना कर दिया था। वे पंजोखरा से आगे नहीं गये।

इतिहास साक्षी है कि औरंगज़ेब के कहने पर मिर्ज़ा राजा जय सिंह ने श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब के गुरुत्व (गुरु होने की योग्यता) की परीक्षा लेने हेतु एक स्वांग रचा। राजा जय सिंह के घर में रानी तथा उसकी दासियां थीं। सभी का पहनावा एक जैसा कर दिया गया। गुरु जी को रानी की पहचान बताने के लिए कहा गया। गुरु जी मुस्करा पड़े और अपनी छड़ी के इशारे से रानी को सबसे अलग कर दिया।

औरंगजेब तक गुरु जी की महिमा की साखियां (गवाहियां) पहुंची। उसने गुरगद्दी के प्रति रामराय के पक्ष, दावे को झूठा कहकर रद्‌द कर दिया।

गुरु जी दिल्ली में रहकर धर्म-प्रचार के कार्यों को देखने लगे। प्रतिदिन दीवान सजता और श्रद्धालु बाल-गुरु जी के दर्शन कर धन्य हो जाते। इस प्रचार ने सिक्खी को दिल्ली के कोने-कोने में पहुंचा दिया। जो कुछ भी गुरु जी को भेंट किया जाता, उसे वे ज़रूरतमंद लोगों में बांट देते। उन दिनों दिल्ली में एक भयानक रोग फैल गया। गुरु जी लोगों की पीड़ा दूर

करने हेतु घर-घर तक गए। अपने हाथों से रोगियों का उपचार किया, दुखियों पर उपकार किया। संगत उनके दर्शन करके सुख का अनुभव करती। रामराय कुंठित होकर वहां से देहरादून चला गया और अपना अलग संप्रदाय बनाकर बैठ गया।

दिल्ली से गुरु जी लौटने ही वाले थे कि उन पर रोग का अचानक हमला हो गया। रोग के साथ ही चेचक भी निकल आई। रोग कड़ा हो गया तो सिक्खों ने उनका अंतिम समय नज़दीक आया समझकर निवेदन किया कि गुरु जी! आप गुरगद्दी की ज़िम्मेदारी किसे देकर जा रहे हैं ? गुरु जी ने दो शब्द 'बाबा-बकाले' कहे। 'बाबा' इसलिए कहा, क्योंकि श्री गुरु तेग बहादर साहिब रिश्ते में उनके 'बाबा' (दादा) लगते थे और 'बकाला' जगह का नाम है जहां वे उस समय निवास कर रहे थे। उन्होंने नौवें गुरु जी के बारे में संकेत दिया तथा ३० मार्च, सन् १६६४ को ज्योति-जोत समा गए।

श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब ने तीन वर्ष तक गुरिआई की ज़िम्मेदारी को संभाले रखा। बेशक आयु छोटी थी, फिर भी जिस सूझबूझ व साहस के साथ उन्होंने ज़िम्मेदारियों को संभाले रखा, वह सब सिक्ख इतिहास में वर्णित है। प्रिंसीपल सतिबीर सिंघ के अनुसार, "रामराय की धमकियों की परवाह नहीं करनी, औरंगज़ेब की धौंस को न मानना, धर्म-प्रचार इसी तरह निर्भीकता से जारी रखना और अंत समय में उत्तराधिकारी का सही व उचित चुनाव करना .... उनके बड़े व्यक्तित्व को दर्शाने के लिए पर्याप्त है। रामराय तथा धीरमल का ख़्याल था कि वह समय, जिसकी उन्हें प्रतीक्षा थी, आ गया है। उन्हें अब 'गुरु' मानने से कोई इंकार नहीं कर सकता, परंतु श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब ने 'बाबा बकाला' उच्चारित कर उनकी उम्मीदों पर पानी फेर दिया।"

भाई गुरदास जी (द्वितीय) लिखते हैं कि श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब आठवें योद्धा-गुरु थे, जिन्होंने दिल्ली में जाकर शरीर को त्यागा। श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब ने बाल रूप में विशेष कारनामे किए एवं सहज रूप में शरीर का त्याग कर ज्योति परम ज्योति में मिला दी। वे निर्भीक होकर डटे रहे और मुगलों को मुंह की खानी पड़ी। वे वक्त की हकूमत के आगे झुके नहीं और सिक्खी के सम्मान पर आंच नहीं आने दी। गुरगद्दी का झगड़ा औरंगज़ेब द्वारा ही उकसाकर बढ़ाया गया था। वो सिक्खी के महान घर को खत्म तो न कर सका, बल्कि उसका अपना ही सर्वनाश हो गया :

हरिकिसन भयो असटम बल बीरा।
जिन पहुंचि देहली तजिओ सरीरा।
बाल रूप धरि स्वांग रचाइओ।
तब सहिजे तन को छोडि सिधाइओ।
इउ मुगलनि सीस परी बहु छारा।
वै खुद पति सो पहुंचे दरबारा।
औरंगे इह बाद रचाइओ।
तिन अपना कुल नाम कराइओ (वार ४१:२२)

जहां श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब का जीवन बड़ों के लिए श्रद्धापूर्ण, आदर्शपूर्ण, स्तुतिपूर्ण है, वहीं उनके महान कार्यों से बच्चे प्रेरणा, मार्गदर्शन, रोशनी लेकर सामाजिक, धार्मिक व आध्यात्मिक कार्यों में प्रवृत्त हो सकते हैं। प्रत्येक माता-पिता को चाहिए कि वे अपने बच्चों को श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब के जीवन के बारे में ज़रूर बताएं और गुरमति मार्ग पर चलने में उनकी अगवानी व मदद करें। ❂

भाई तारू सिंघ जी शहीद

*-बीबी बृजिंदर कौर**

भाई गुरदास जी के अनुसार शहीद वो है जिसमें संतोष है, भ्रम-भाव का अभाव है :
साबरु सिदकि सहीदु भरम भउ खोवणा ॥
(वार ३:१८)

भारतीय इतिहास में शहादत की परंपरा का निश्चित एवं विकसित रूप सिक्ख लहर के साथ ही आरंभ होता है। चाहे यह संकल्प सामी है मगर भारत में शहादत की परंपरा को अमीर बनाने वाला सिक्ख धर्म ही है। शहीदों का इतिहास आरंभ ही धर्म से होता है। इसमें कोई अतिकथनी नहीं कि सिक्ख इतिहास शहीदों का इतिहास है।

सिक्ख शहादत के संकल्प का पहला पक्ष गुरु शहीदों का है और दूसरा पक्ष सिक्ख शहीदों का। सिक्ख शहीद परंपरा का आरंभ श्री गुरु तेग बहादर साहिब के साथ शहीद हुए तीन सिक्खों-- भाई मतीदास जी, भाई सतीदास जी और भाई दिआला जी की शहादतों के साथ होता है। इस परंपरा को चार साहिबजादों ने और गहरा रंग दिया। इसी शृंखला में भाई तारू सिंघ जी ने योगदान डाला। भाई तारू सिंघ जी अठारहवीं सदी के इतिहास के शहीदों में से एक महान सिक्ख शहीद थे।

भाई तारू सिंघ जी ज़िला श्री अमृतसर के गांव पूहला के निवासी थे। उनके माता-पिता के नाम सम्बंधी कोई जानकारी नहीं मिलती। खेतों में हल-चलाकर, मेहनत करके अन्न पैदा करना उन्होंने अपने जीवन-निर्वाह का साधन बनाया हुआ था।

"घालि खाइ किछु हथहु देइ" के अनुसार भाई तारू सिंघ जी किरत (श्रम) द्वारा हुई कमाई को बांटकर छकते थे। भाई जी पंथ के सच्चे सेवक और पंथदर्दी थे। क्षेत्र के हिंदू-मुसलमान भी उनके उच्च एवं शुद्ध चरित्र का सम्मान करते थे।

यह समय जकरिया ख़ान के अत्याचारों की चरम सीमा का कहा जा सकता है। जंगलों में बसते सिक्खों को पकड़ना, खत्म करना उसके लिए मुश्किल हो गया था, जिस कारण हीनता को छुपाने के लिए शाही दबदबा निर्दोष सिक्खों पर पड़ना शुरू हुआ।

भाई तारू सिंघ जी का स्वभाव बांटकर खाने का था, जरूरतमंदों की सहायता करने वाला था। सिक्खी आचरण के अनुसार वे आए-गए की मदद करते रहते थे। अतिथियों को परशादा-पानी छकाना वे अपना धन्य भाग्य समझते थे। बेघर हुए सिक्खों को जंगलों में लंगर पहुंचाने में उनके माता जी एवं बहन जी भी उनकी मदद किया करते थे। यह वो समय था जब मुगल सरकार की गलत नीतियों की विरोधता कर रहे सिक्खों की मदद करना जान जोख़िम में डालने के समान था। इसका ज़िक्र भाई रतन सिंघ (भंगू) ने इस प्रकार किया है :

जो सिंघन को कोऊ बचावै।
सो निज आपणी जान गवावै।
आए सिंघ बतावै नाही। वै भी आपणी जान गवाई।
जो सिंघन को देवै नाज। मुसलमान करहि तिह काज।

भाई तारू सिंघ जी अपनी जान हथेली पर रखकर इस खतरे के साथ खेलते रहे; बेघर हुए सिंघों

को गुप्त मार्ग द्वारा अन्न-पानी पहुंचाकर बेझिझक उनकी सेवा करते रहे। 'पंथ प्रकाश' कृत ज्ञानी गिआन सिंघ में इसका ज़िक्र इस प्रकार आया है :

आप दूख भूख सैहैं, सिंघन को सूख दैहै।
भूजे चणे चाबै आप, रोटी उनैं दाइ है।

(पृष्ठ ७४६)

इसी क्षेत्र में हरिभगत नामक निरंजनी महंत रहा करता था। यह जंडिआला निवासी हंदाल (१६३०-१७०५) का संप्रदाय था। हंदाल श्री गुरु अमरदास जी का सिक्ख था जो हर समय 'निरंजन-निरंजन' जपता रहता था। श्री गुरु अमरदास जी ने उसे प्रचारक नियुक्त करके २२ मंजियों में से एक मंजी भी बख़्शी। इसका पुत्र बिधीचंद बड़ा कुकर्मी निकला। उसने श्री गुरु नानक देव जी की जनम-साखी में मनमर्जी से परिवर्तन किया ताकि अपने अवगुणों को सिक्खी के अनुकूल सिद्ध कर सके। हरिभगत इसी संप्रदाय का महंत था जो सिंघों के विरुद्ध लाहौर के ज़ालिम हाकिमों को अयोग्य सहायता देता था। *(डॉ. जसवंत सिंघ नेकी, अरदास, पृष्ठ १५४)* यही हरिभगत भाई तारू सिंघ जी के नेक आचरण से चिढ़ता था। जकरिया ख़ान ने हरिभगत से पूछा कि हम इन सिंघों को इतना खत्म करते हैं, इनके लिए व्यापार कोई नहीं रहने दिया, व्यापारी कोई छोड़ा नहीं, गुरुद्वारों में चढ़ावों पर भी पाबंदी लगा दी है, फिर भी ये सिंघ खत्म नहीं होते, अभी भी ज़िंदा हैं। इस स्थिति की नज़ाकत को पहचानते हुए हरिभगत ने भाई तारू सिंघ जी के विरुद्ध जकरिया ख़ान के कान भरने शुरू किए कि भाई तारू सिंघ सिंघों को पनाह देता है, भोजन छकाता है। बिना किसी पड़ताल के भाई तारू सिंघ जी को गिरफ्तार करने के हुक्म जारी हो गए।

भाई तारू सिंघ जी को छुड़ाने के लिए यत्न किए गए, लेकिन भाई तारू सिंघ जी ने कहा, चिंता मत करो, क्योंकि उनका अटल विश्वास था कि कुर्बानी देकर ही शाही तख़्त को हिलाया जा सकता है।

भाई तारू सिंघ जी को केश कटवाकर इसलाम कबूल करने के लिए कहा तो उन्होंने उत्तर में कहा, मैं सिर कटवा सकता हूं, मगर परमात्मा की दी प्यारी व पवित्र दात 'केश' नहीं कटवा सकता। दुनिया भर की खुशियां देने का वायदा किया गया, मगर भाई तारू सिंघ जी किसी भी कीमत पर अपने केशों को शरीर से अलग करने के लिए नहीं माने।

शाही फरमान पाकर जल्लाद रंबी द्वारा भाई तारू सिंघ जी की खोपड़ी उतार रहा था और भाई जी जपु जी साहिब का पाठ कर रहे थे। सारा शरीर लहू-लुहान हो गया, मगर आपके मुंह में से उफ़ तक न निकली। 'श्री गुर पंथ प्रकाश' का कर्ता लिखता है :

दोहरा--
पैनी थी रंबी करी, धर मत्थयों दई दबाइ।
मत्थे ते कंनां तई, गिचीओं दई पुटाइ ॥२०॥
चौपई--
सिंघ जी मुख ते सी न करी,
धंन धंन गुरमुख कहणी सरी।
हकारो देख लोक बहु भरे,
जो सोअ सुनैं सु है है करे ॥२१॥ (पृष्ठ ३७१)

खोपड़ी उतारने के बाद भाई जी को खाई में फेंक दिया गया। भाई जी इस हालत में भी बाणी पढ़ते रहे।

इतिहासकार लिखते हैं कि जिस दिन उनकी खोपड़ी उतारी गई उसी दिन जकरिया ख़ान का पेशाब बंद हो गया। उसकी हालत बहुत खराब हो गई। वो बिना पानी के मछली की भांति तड़पने लगा। भाई सुबेग सिंघ की

मदद से जकरिया ख़ान अपनी गलती की क्षमा मांगने के लिए भाई तारू सिंघ जी के पास पहुंचा। भाई तारू सिंघ जी ने कहा कि यह सब परमात्मा की लीला है।

जकरिया ख़ान की मृत्यु के बाद भाई जी बिना खोपड़ी की हालत में रहे और वाहिगुरु का नाम-सिमरन करते रहे। विद्वानों का विचार है कि वे ऐसी हालत में २२ दिन तक रहे, तत्पश्चात शहादत प्राप्त कर गए। इस सम्बंध में 'बंसावलीनामा' के कर्ता भाई केसर सिंघ (छिब्बर) ने इस प्रकार लिखा है :

इक सिख तारू सिंघ माझे दा, पकड़िआ आइआ लहौर।
सिरों उतारी खलड़ी, समेत केसां अखोड़।
सिख हेठ बैठा बद्धा जपु पढ़दा रहिआ।
सिर उपरों खलड़ी समेत केस लुहा लइआ।५८।. .
पहिले मुइआ नबाबु, पिच्छे तारू सिंघ चलिआ।
(पृष्ठ २२४)

भाई तारू सिंघ जी की शहीदी ने सिक्खी सिदक का सम्बंध केशों के साथ और भी पक्की तरह से जोड़ दिया। केश हमारे धैर्य, हिम्मत, शानो-शौकत का चिन्ह बन गए। रंबी से खोपड़ी उतरवाने वाले सिक्ख (भाई तारू सिंघ जी) की यह धन्य कमाई सदा के लिए अमर हो गई। उनकी महान कुर्बानी को सिक्ख पंथ की रोज़ाना की अरदास द्वारा नमस्कार एवं सम्मान प्रदान किया जाता है।

कविताएं

सिंघ गर्जना
(खालसा सृजना के उपलक्ष्य में)

बिछी जो घास धरती पर है, बनकर ख़ार बोलेगी।
ग़रीबों की जुबां बनकर, मेरी किरपान बोलेगी।
गर्दन कट तो सकती है, मगर झुक नहीं सकती,
पहले 'चमकौर' फिर 'सरहिंद की, दीवार बोलेगी।
छुपाए छुप नहीं सकते शहीदों के ये अफ़साने,
अगर सूली न बोली तो, लहू की धार बोलेगी।
युगों तक रौशनी मिलती रहेगी इन चिरागों से,
हर लौ परवानों की, जय-जयकार बोलेगी।
मिलाना आंख है अब झोंपड़ी को शीशमहलों से,
बग़ावत की यह चिंगारी, सर-ए-दरबार बोलेगी।
कोई रौंदे नहीं इंसानियत को अपने पैरों में,
कि गैरत आदमी की बन के, पहरेदार बोलेगी।
न होगी पत्थरों की, होगी पूजा अब भगौती [१] की,
जहां भी जुल्म बोलेगा, वहीं किरपान बोलेगी।
जहां रख दूं कदम अपना, वहीं होगी मंज़िल,
मेरे हर-हर कदम की, गर्मी-ए-रफ़्तार बोलेगी।
तुम्हारे पांव की बेड़ी जुबां बन जाएगी 'पंछी',
रहोगे तुम अगर ख़ामोश, तो झनकार बोलेगी।

१. भगौती = कृपाण

-स. करनैल सिंघ(सरदार पंछी), पंजाब माता नगर, लुधियाना- १४१०१३, मो. ९४१७०-९१६६८

ये पेड़ ऊंचे

जब बहती है पवन, ये पेड़ अपने पात हिलाते।
समझो तब ये सब, एक अकाल की फ़तहि गजाते।
पेड़ और पौधे जो हैं, कुदरत का करिश्मा।
इनमें बसी रहती है, कुदरत रानी अद्भुत रिश्मा।
यूं ही नहीं कहते हैं, पेड़ों को कुदरत का खज़ाना।
इनको चाहता हर कोई, अपने आस-पास बसाना।
ऊंचे पेड़ देख मानस का, मन ऊंचा हो जाता।
ऊंचाई का सपना फौरन, उसके मन में समाता।
जब मानस के लिए ये, अपनी आहुति दे जाते।
आहुति रास्ता उज्जवल होता, कुर्बानी का परचम लहराते।

-डॉ. सुरिंदरपाल सिंघ, पत्तण वाली सड़क, पुराना शाला, गुरदासपुर- १४३५२१, मो. ९४१७१-७५८४६

-श्री प्रशांत

महान बलिदानी भाई तारू सिंघ जी

-स. रणवीर सिंघ मांदी*

अत्याचार कितना ही भयानक हो, धीर-वीर मनुष्य के रौंगटे खड़े कर देने वाला हो, पर धर्म पर दृढ़ रहने वाले बलिदानी पुरुष को अपने पथ से डिगा नहीं सकता। सिक्ख इतिहास बलिदान का ही दूसरा नाम है।

सिक्खों द्वारा नित्य-प्रति अरदास करते हुए उच्चारित शब्दों --- *"जिन्हां सिंघां-सिंघणीआं ने धरम हेत सीस दित्ते, बंद-बंद कटवाए, खोपरीआं लुहाइआं, चरखड़ीआं ते चढ़ाए गए, आरिआं नाल तन-चिरवाए, . . . सिक्खी केसां-सवासां नाल निबाही, तिन्हां दी कमाई दा धिआन धरके खालसा जी, बोलो जी वाहिगुरु!"* द्वारा श्रद्धांजलि दी जाती है। बाबर के अत्याचारों को देखकर श्री गुरु नानक देव जी अंतरनाद कह उठे थे :

एती मार पई करलाणे तैं की दरदु न आइआ ॥
(पन्ना ३६०)

"हे परमात्मा! बाबर ने इतना जुल्म ढाया है कि सारी मानवता कांप उठी है, परंतु हे दाता! तुम्हें क्यों दया नहीं आई ?"

कालान्तर में जहांगीर ने श्री गुरु अरजन देव जी को तप्त सुर्ख तवी पर बैठाया, गर्म रेत शरीर पर डाली; जुल्म अपनी इंतहा पर था, पर धर्मनिष्ठ गुरु जी शांतचित्त *"तेरा कीआ मीठा लागै"* कहकर सब सहन किए जा रहे थे।

औरंगजेब ने तो जुल्म की सीमायें ही लांघ दी थीं। भाई मतीदास जी, भाई सतीदास जी, भाई दिआला जी के साथ जो जुल्म किये उनकी मिसाल विश्व के इतिहास में कहीं नहीं मिलती। चांदनी चौंक, दिल्ली में श्री गुरु तेग बहादर साहिब ने शीश देकर शहादत दी। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने अपनी कालजयी कृति 'बचित्र नाटक' में इस घटना का ज़िक्र करते हुए लिखा है :

साधन हेति इती जिनि करी ॥
सीसु दीआ पर सी न उचरी ॥ (अध्याय ५)

बाबा बंदा सिंघ बहादर आदि शूरवीरों के अतिरिक्त इसी श्रृंखला में एक महान बलिदानी भाई तारू सिंघ जी भी हुए हैं, जिनके प्रति अरदास में *"खोपरीआं लुहाईआं"* का ज़िक्र आता है। भाई तारू सिंघ जी धर्म-कर्म और सिक्खी की मर्यादा कायम रखने की खातिर लाहौर के सूबेदार जकरिया ख़ान के जुल्मों का शिकार हुए।

श्री अमृतसर के गांव पूहला में पितृ-विहीन निवासी भाई तारू सिंघ जी अपनी मां और बहन के साथ रहते थे। ईमानदार और मेहनती थे। खेतीबाड़ी करते, सारंगी पर परमात्मा के भजन गाते और निडर थे। तत्कालीन सिंघ संघर्ष में संलग्न सिक्खों की रसद-पानी आदि द्वारा सहायता भी किया करते थे। इस बात की जानकारी गुप्तचरों द्वारा जकरिया खान तक बढ़ा-चढ़ाकर दी जाती थी। एक दिन एक गरीब माछी की बेटी को इलाके के हाकिम जाफर बेग ने अगवा करने की कोशिश की। भाई जी ने उसके कब्जे से लड़की को मुक्त करवा दिया। इस पर जाफर बेग और उसके कुछ लोगों ने लाहौर के सूबेदार जकरिया ख़ान

(शेष पृष्ठ ५० पर)

*मुहल्ला-डाकखाना : मांदी, तहसील: नारनौल, जिला; महेंद्रगढ़ (हरियाणा)

सूझवान, समर्पित एवं आत्मबलिदानी : भाई मनी सिंघ जी

*-डॉ राजेंद्र सिंघ 'साहिल'**

भाई मनी सिंघ जी उन सिक्ख शख़्सियतों में से एक हैं जिन्होंने गुरु साहिबान की शरण में रहकर जीवन-जुगत सीखी और गुरु साहिबान के बाद अपने कुशल नेतृत्व से सिक्खों का मार्गदर्शन किया।

गुरसिक्ख परिवार में जन्म : भाई मनी सिंघ जी के जन्म एवं जन्म-स्थान के विषय में सिक्ख इतिहास-ग्रंथ एकमत नहीं दिखाई देते। 'महान कोश' कर्ता भाई कान्ह सिंघ नाभा समेत अनेक इतिहासकार मानते हैं कि भाई मनी सिंघ जी का जन्म क्षेत्र पटियाला के गांव कैबोवाल में सन् १६६८ ई में हुआ। इस गांव के खंडहरों का टीला आज भी लौंगोवाल गांव के निकट स्थित है।

'प्रमुख सिक्ख शखसीअतां' पुस्तक में डॉ जसबीर सिंघ ने भाई सेवा सिंघ भट्ट की रचना 'शहीद बिलास' के आधार पर भाई मनी सिंघ जी के जन्म-स्थान एवं वंश-परंपरा का तर्क-आधारित निर्धारण किया है। इनके अनुसार भाई मनी सिंह जी का जन्म सुलतानपुर के निकट स्थित गांव अलीपुर में चेत्र शुक्ल पक्ष द्वादशी, दिन रविवार, बिक्रमी संवत् १७०१ मुताबिक मार्च के अंतिम सप्ताह में सन् १६४४ ई में हुआ।

वंश-परंपरा के अनुसार भाई मनी सिंघ जी के परिवार का सम्बंध छठम पातशाह साहिब श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब से जा जुड़ता है। भाई साहिब के दादा भाई बलू राव छठम पातशाह के अनन्य सिक्ख एवं सिपहसालार थे। भाई बलू राव पिपली साहिब, श्री अमृतसर की जंग में शहीद हुए थे। भाई बलू राव के १२ पुत्र थे। इनमें से दूसरे नंबर पर थे--भाई माई दास। भाई माई दास के दो विवाह हुए थे। पहली पत्नी से सात एवं दूसरी पत्नी से पांच पुत्र पैदा हुए। पहली पत्नी के सात पुत्रों में से भाई मनी सिंघ जी एक थे। इस प्रकार भाई साहिब १२ भाई थे और सभी ने सिक्ख आदर्शों की रक्षा के लिए कुर्बानी दी।

बालपन एवं चार गुरु साहिबान की छत्र-छाया मिलना : भाई मनी सिंघ जी के बचपन का नाम 'मनी राम' था। आपको प्यार से 'मनीआ' कहकर बुलाया जाता था। भाई मनी राम जी जब १३ वर्ष के हुए तो पिता भाई माई दास उन्हें लेकर सप्तम पातशाह श्री गुरु हरिराय साहिब के दरबार में कीरतपुर साहिब आए। सप्तम पातशाह इस सुंदर बाल को देखकर अति प्रसन्न हुए और *"मनीआ इह गुनीआ होवेगा बीच जग सारे"* कहकर उसे गुणवान होने का आशीर्वाद दिया। भाई मनी राम जी गुरु-दरबार में रहकर सेवा आदि के कार्य करते हुए मन पवित्र करने में लग गये। इन्हीं दिनों मात्र १५ वर्ष की आयु में भाई मनी राम जी का विवाह खैरपुर के भाई लक्खी राय की सुपुत्री माता सीतो जी से हो गया।

भाई मनी राम जी निरंतर गुरु-घर में सेवा करते रहने से गुरु-परिवार के प्रिय बन गये। सप्तम पातशाह श्री गुरु हरिराय साहिब के ज्योति-जोत समाने के बाद भाई मनी राम जी आठवें पातशाह श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब की

**१/३३८, 'स्वप्नलोक', दशमेश नगर, मंडी मुल्लांपुर दाखा (लुधियाना), पंजाब-१४११०१, मो: ९४१७२-७६२७१*

सेवा में आ गये। बाल-गुरु जब सन् १६६४ ई में दिल्ली गये तब भाई मनी राम जी साथ थे। अष्टम पातशाह सिर्फ सात वर्ष की आयु में ज्योति-जोत समा गये। तब भाई मनी राम जी बकाला गांव में निवास कर रहे श्री गुरु तेग बहादर साहिब के पास चले आये। इन्हीं दिनों कुछ समय अपने गांव अलीपुर में रहने के बाद श्री गुरु तेग बहादर साहिब के गुरगद्दी पर विराजमान होने पर भाई मनी राम जी पुन: अनंदपुर साहिब (चक्क नानकी) आकर गुरु-सेवा में लीन हो गये।

नवंबर, सन् १६७५ ई में जब नवम् पातशाह औरंगज़ेब के बुलावे पर दिल्ली गये तो भाई मनी राम जी को बाल श्री गोबिंद राय जी (श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी) के पास ही रुकने का हुक्म मिला। भाई मनी राम जी के बड़े भ्राता भाई दिआला जी नवम् पातशाह के साथ दिल्ली गये। गुरु जी को चांदनी चौंक में शहीद करने से पहले भाई दिआला जी खौलते पानी की देग में उबालकर शहीद कर दिये गये।

दशमेश पिता की सेवा में भाई मनी राम जी : नवम् पातशाह की शहादत के बाद भाई मनी राम जी श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की सेवा में आ गये। दशमेश पिता सिक्खों को शस्त्रधारी बनाने में लगे हुए थे। गुरु जी के इन प्रयासों में भाई मनी राम जी पेश-पेश रहे। आप शीघ्र ही चुस्त-फुर्तीले, युद्ध-कला-कुशल योद्धा के रूप में उभरे।

भाई साहिब पाउंटा साहिब में भी दशमेश पिता के साथ ही रहे। यही नहीं, देहरादून में गुरबख़्श नाम के अहंकारी फकीर ने जब दशमेश पिता के प्रति अशुभ वचन बोले तो भाई साहिब ने अपने खंडे से उसका सिर उड़ा डाला था।

भाई मनी राम जी ने दशमेश पिता के साथ प्रत्येक युद्ध में उत्साह से भाग लिया। विशेष रूप से आपने 'भंगाणी के युद्ध' में विशेष जौहर दिखाए। जंगों में भाई मनी राम जी एक दिलेर योद्धा के रूप में उभरे। भाई मनी राम जी की अद्वितीय सेवा से प्रसन्न होकर दशम पातशाह ने संवत् १७४८ वि. (सन् १६९१ ई.) वैसाखी वाले दिन आपको गुरु-दरबार का 'दीवान' नियुक्त किया।

योद्धा भी और विद्वान भी : भाई मनी राम जी तेग के साथ-साथ कलम के भी धनी थे। आपको लंगर आदि की सेवा से जब भी फुरसत मिलती आप गुरबाणी का अभ्यास आरंभ कर देते। गुरमति एवं गुरबाणी को समझने के लिए आपने भाई गुरदास जी की वारों का गहन अध्ययन किया। जब दशमेश पिता ने देखा कि आपकी रुचि अध्ययन-चिंतन की ओर अधिक है तब आपको लंगर की सेवा से मुक्त करके धर्म-ग्रंथों के अध्ययन-विश्लेषण की सेवा सौंपी गई। थोड़े ही समय में भाई मनी राम जी संस्कृत एवं फारसी के उत्कृष्ट विद्वान बन गये। गुरु साहिब ने आपको एक पाठशाला खोल दी जहां आप सिक्खों को धार्मिक विद्या देने लगे। भाई मनी राम जी की श्रेष्ठ विद्वता से प्रसन्न होकर दशम पातशाह ने आपको 'ज्ञानी' का खिताब बख़्शा। सिक्ख धर्म के ज्ञानियों में आपका स्थान महत्त्वपूर्ण है।

ज्ञानी गिआन सिंघ ने अपने ग्रंथ 'तवारीख गुरू खालसा' एवं 'पंथ प्रकाश' में भाई मनी राम जी की विद्वता को विशेष रूप से सराहा है। उन्होंने आपकी गणना दशमेश पिता के बावन दरबारी कवियों में की है :

कवी बवंजा थे गुर पास।
उन मै गनना इस की खास। (पंथ प्रकाश)

भाई मनी राम जी से भाई मनी सिंघ जी : सन् १६९९ ई. की वैसाखी वाले दिन जब दशम पातशाह श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने 'खालसे' की सृजना की तो उसी दिन भाई मनी राम जी

ने लगभग ५५ वर्ष की आयु में दशमेश पिता के हाथों अमृत छका और भाई मनी राम जी भाई मनी सिंघ जी हो गये :

निज कर ते गुर अंम्रित दीयो।
मनीए थीं सिंघ मनीए कीयो। (शहीद बिलास)

इसी सौभाग्यशाली दिन भाई मनी सिंघ जी के भाइयों एवं पांच पुत्रों ने भी दशमेश पिता के कर-कमलों से अमृत-पान किया और सिंघ सज गये।

श्री हरिमंदर साहिब, श्री अमृतसर की प्रबंध-सेवा : इन्हीं दिनों श्री हरिमंदर साहिब, श्री अमृतसर का प्रबंध देखने वाले महंत सोढी हरि जी का देहांत हो गया। इसके बाद उनका पुत्र निरंजन राय गद्दी पर बैठा। वह अपने संप्रदाय को एकजुट न रख सका। इसी वजह से श्री हरिमंदर साहिब का प्रबंध सुचारू रूप से चलाने वाला कोई न रहा।

श्री हरिमंदर साहिब की संगत ने दशम पिता से आग्रह किया कि श्री हरिमंदर साहिब की प्रबंध-व्यवस्था दुरुस्त करने के लिए सिंघ भेजें। दशम पातशाह ने भाई मनी सिंघ जी को पांच अन्य सिंघों-- भाई भूपत सिंघ, भाई गुलज़ार सिंघ, भाई कौर सिंघ, भाई दान सिंघ एवं भाई कीरता सिंघ के साथ श्री हरिमंदर साहिब की मर्यादा बहाल करने के लिए भेजा। भाई साहिब ने इस कर्त्तव्य को बाखूबी निभाया।

श्री अमृतसर निवास के दौरान भी भाई मनी सिंघ जी कई बार अनंदपुर साहिब आये और गुरु-चरणों में हाज़िरी भरी।

सम्पूर्ण परिवार का आत्म बलिदान : भाई मनी सिंघ जी का पूरा परिवार गुरु-घर की सेवा में सदा तत्पर रहा। भाई मनी सिंघ जी के सभी भाइयों ने गुरु-कार्य में जीवन न्योछावर किया। आपके पांचों पुत्र प्रसिद्ध चमकौर की जंग (दिसंबर, १७०४ ई) में दोनों बड़े साहिबजादों-- बाबा अजीत सिंघ जी और बाबा जुझार सिंघ जी के साथ शहीद हुए। मदमस्त हाथी को 'नागणी' के एक ही वार में मार गिराने वाले भाई बचित्तर सिंघ भी भाई मनी सिंघ जी के ही सुपुत्र थे।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब की हजूरी बीड़ को लिपि-बद्ध करना : दिसंबर, १७०४ ई में जब श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने अनंदपुर साहिब छोड़ा तब भाई भाई मनी सिंघ जी को माता सुंदरी जी एवं माता साहिब कौर जी के साथ दिल्ली जाने का आदेश दिया गया। आप माताओं के साथ कुछ समय दिल्ली में रहे। गुरु साहिब जब दमदमा साहिब, तलवंडी साबो पहुंचे तो आप भी माताओं के साथ गुरु-दर्शन को दमदमा साहिब आ गये।

इस समय पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी द्वारा तैयार करवाई गई श्री गुरु ग्रंथ साहिब की बीड़ में नवम् पातशाह की बाणी शामिल करनी शेष थी। दशमेश पिता ने बीड़ को पुन: लिपिबद्ध करने के लिए भाई मनी सिंघ जी को चुना। गुरु जी बोलते थे और भाई साहिब लिखते थे। इस प्रकार श्री गुरु ग्रंथ साहिब की सम्पूर्ण बीड़ तैयार हुई। पहली आदि बीड़ श्री गुरु अरजन देव जी ने भाई गुरदास जी से लिखवाई थी।

दशम पातशाह जब दक्षिण की ओर जाने लगे तो उन्होंने भाई मनी सिंघ जी को श्री हरिमंदर साहिब की सेवा-संभाल करते रहने का हुक्म दिया। भाई साहिब श्री अमृतसर आ गये और लंबे समय तक सोढी हरि जी के पुत्रों-पौत्रों से श्री हरिमंदर साहिब की रक्षा करने के लिए संघर्ष करते रहे। इस प्रकार भाई साहिब ने 'मीणे महंतों' के षड्यंत्रों से श्री हरिमंदर साहिब की रक्षा की।

बाबा बंदा सिंघ बहादर के काल में भाई मनी सिंघ जी : बाबा बंदा सिंघ बहादर नांदेड़ से गुरु-आज्ञा सिर-माथे धारण करके पंजाब आये

और सिक्खों को नेतृत्व प्रदान किया। बाबा जी की विजयों ने सिक्खों का एक बार फिर बोलबाला कर दिया। इस काल में भाई मनी सिंघ जी का पूरा सहयोग बाबा बंदा सिंघ बहादर को मिला।

बंदई खालसा एवं तत्त खालसा का विलय : सन् १७१६ ई में बाबा बंदा सिंघ बहादर की शहादत के बाद खालसा पंथ 'बंदई खालसा' और 'तत्त खालसा' में विभाजित हो गया। एक गुट बाबा बंदा सिंघ बहादर को अपना नेता मानने लगा, जो 'बंदई खालसा' कहलाया और दूसरा गुट 'तत्त खालसा' कहलाया। सिक्खों में पड़ी इस फूट के कारण सभी सिक्ख नेता दुखी थे। ऐसे में माता सुंदरी जी ने दोनों गुटों में समझौता करवाने की जिम्मेदारी भाई मनी सिंघ जी को सौंपी।

भाई मनी सिंघ जी ने सूझ-बूझ दिखाते हुए दोनों गुटों को श्री हरिमंदर साहिब, श्री अमृतसर की परिक्रमा में आमंत्रित किया। भाई साहिब ने एकता करवाने के उद्देश्य से एक युक्ति सुझाई। दो पर्चियां बनाई गईं। एक पर तत्त खालसा का उद्घोष लिखा गया और दूसरी पर बंदई खालसा का उद्घोष लिखा गया। दोनों पर्चियां अमृत सरोवर में छोड़ी गईं। थोड़ी देर बाद बंदई खालसा की पर्ची डूब गई और तत्त खालसा को विजयी घोषित कर दिया गया। बंदई खालसा ने यह फैसला मानने से इंकार कर दिया।

इसके बाद बंदई गुट के पहलवान संगत सिंघ और तत्त खालसा के पहलवान मेहर सिंघ में कुश्ती करवाई गई, जिसे मेहर सिंघ ने जीता। बंदई खालसा वालों ने अपनी जिद छोड़ दी और इस तरह भाई मनी सिंघ जी के प्रयासों से खालसा पंथ एक हो गया।

भाई मनी सिंघ जी की शहादत : यह वो समय था जब सिक्खों को श्री हरिमंदर साहिब में कोई भी आयोजन करने के बदले में मुगल बादशाह को 'ज़ज़िया' देना पड़ता था। राजनीतिक तौर पर अव्यवस्थित रहने के कारण सिक्ख लंबे समय से श्री हरिमंदर साहिब में दीवाली नहीं मना पाये थे। सन् १७३३ ई में पंथ ने श्री हरिमंदर साहिब में बंदी छोड़ दिवस मनाने की योजना बनाई। इसके एवज में लाहौर के सूबेदार ज़करिया ख़ान को दस हज़ार रुपये 'ज़ज़िया' के रूप में देने का समझौता किया गया।

इतने में भाई मनी सिंघ जी को गुप्त सूचना प्राप्त हुई कि लाहौर दरबार और खालसा-विरोधी शक्तियां षड्यंत्र रच रही हैं कि बंदी छोड़ दिवस पर एकत्र हुए सिक्खों को घेरकर एक साथ खत्म कर दिया जाए। भाई साहिब ने तुरंत संदेश भेजकर सिक्खों को आने से रोक दिया। बंदी छोड़ दिवस के दिन कोई सिक्ख न आया।

इस पर लाहौर का सूबेदार जकरिया ख़ान झल्ला उठा। उसने भाई मनी सिंघ जी को गिरफ्तार करने का हुक्म दे दिया। भाई साहिब साथियों समेत गिरफ्तार करके लाहौर लाए गए। फतवों की आड़ में भाई गुलज़ार सिंघ, भाई भूपत सिंघ, भाई मुहकम सिंघ, भाई चंन सिंघ, भाई कीरत सिंघ, भाई आलम सिंघ, भाई संगत सिंघ, भाई कान्ह सिंघ आदि पर अनेक अत्याचार किये गये। भाई गुलज़ार सिंघ को उल्टा लटका कर जीते-जी खाल उतारी गई। भाई भूपत सिंघ की आंखें नोचकर चरखड़ी पर चढ़ा दिया गया।

भाई मनी सिंघ जी को बंद-बंद काटकर शहीद करने का फतवा दिया गया। सन् १७३४ ई वाले दिन, लगभग नब्बे वर्ष की आयु वाले भाई मनी सिंघ जी को लाहौर के निखास चौंक में शरीर का एक-एक बंद काटकर शहीद कर दिया गया। लाहौर किले के निकट भाई मनी सिंघ जी का 'शहीदगंज साहिब' सुशोभित है। ☸

शहीद भाई मनी सिंघ जी

*-डॉ. शब्द कुमार**

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने अपने एक वीर-रस-पूर्ण वचन में कहा था कि *"देह सिवा बरु मोहि इहै, शुभ करमन ते कबहूं न टरों ॥ न डरो अरि सो जब जाइ लरो, निसचै करि अपुनी जीत करों ॥"* अपने तन-बदन के टुकड़े-टुकड़े करवा देने की सीमा तक रणवीरता दिखाने और धर्मवीर होने के साथ शूरवीर भी होने वाले व्यक्ति इस संसार में बहुत कम ही हुआ करते हैं। ऐसे शूरवीरों की गुरु-भक्ति और रणवीरता पर कोई भी संदेह नहीं किया जा सकता। ऐसे ही शूरवीरों में भाई मनी सिंघ जी का नाम सर्वोपरि माना जाता है।

भट्ट कीरत जी के सुपुत्र बोहथ ने मुलतानी-सिंधी भट्ट बही (वही) में यह दर्ज किया है कि इनके पड़दादा का नाम मूले, दादा का नाम बल्लू था और पिता का नाम माई दास था। *("गुरू कीआं साखीआं, पृष्ठ २९)* भाई मनी सिंघ जी का पहला घरेलू नाम 'मनीआ' था। इनका जन्म चेत्र सुदी द्वादशी को रविवार के दिन हुआ था। यद्यपि इनके जन्म-वर्ष के बारे में मतभेद हैं, तथापि सन् १६४४ में जन्म और शहीदी का वर्ष १७३४ ई. मानने के पक्ष में अधिकतर विद्वान् रहे हैं। इस प्रकार इनकी कुल आयु ९० वर्ष ठहरती है। इनका सम्बंध भारद्वाजी पंवार (परमार) राजपूती कुल (घराना) से माना जाता है। इनकी माता जी का नाम मधरी बाई था। उसी की कोख से इनका जन्म अलीपुर उत्तरी, ज़िला मुज़फ्फरगढ़ (वर्तमान पश्चिमी पंजाब, पाकितान) में हुआ था।

डॉ. गुरचरन सिंघ औलख के अनुसार, "इनकी पहली पत्नी सीतो बाई नाम से थी, जो उन सुप्रसिद्ध और हरमन प्यारे भाई लक्खी शाह की सुपुत्री थी, जिन्होंने नवम् पातशाह श्री गुरु तेग बहादर साहिब के धड़ का दाह संस्कार अपने घर को आग लगाकर सम्पन्न किया था। वे व्यापार करने के लिए दिल्ली में निवास किया करते थे, चाहे वे गांव खैरपुर सादात, ज़िला मुज़फ्फरगढ़ के निवासी थे।" *(पुस्तक 'शिरोमणी शहीद', प्रकाशक भाई चतर सिंघ जीवन सिंघ, श्री अमृतसर, प्रथम संस्करण- जनवरी, २०००, पृष्ठ ९९-१००)*

१. गुरु-भक्ति, सेवा और धार्मिक ग्रंथों का लेखन-कार्य : भाई मनी सिंघ जी का सम्बंध श्री गुरु हरिराय साहिब, श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब, श्री गुरु तेग बहादर साहिब और श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के साथ रहा । डॉ. औलख के अनुसार भाई मनी सिंघ जी अपने पिता भाई माई दास के साथ श्री गुरु हरिराय साहिब के दर्शन करने गए और गुरु-घर के ही होकर रह गए थे।

श्री गुरु हरिराय साहिब के परलोक गमन कर जाने के बाद भाई मनी सिंघ जी श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब की सेवा में जुट गए और उनके देहावसान के बाद गांव बकाला जाकर श्री गुरु तेग बहादर साहिब की सेवा करने लगे। जब श्री गुरु तेग बहादर साहिब चक्क नानकी गांव (वर्तमान श्री अनंदपुर साहिब) में गए तब

**कोठी नं. १५४, गली नं. ६, जुझार नगर, पटियाला-१४७००३ (पंजाब); मो. ९०४१५-९१३६०*

भाई मनी सिंघ जी भी उनके साथ थे। भाई मनी सिंघ जी वहां रहते हुए धार्मिक ग्रंथों का बड़ी गहराई से अध्ययन करने लगे थे।

सन् १७०६ में दशम पातशाह श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने भाई मनी सिंघ जी को साथ लेकर श्री गुरु ग्रंथ साहिब में नवम् पातशाह की बाणी सम्मिलित की तथा श्री गुरु ग्रंथ साहिब की कई प्रतिलिपियां तैयार करवाईं। गुरु जी ने इस महान् ग्रंथ और ऐसे ही अन्य धर्म-ग्रंथों की प्रतिलिपियां करवाकर भाई जी के द्वारा सिक्ख संगत को भिजवाईं।

भाई मनी सिंघ जी में महान लिखारी, कुशल व्यवस्थापक, प्रचारक, सेवक, रणवीर सैनिक, संत और सिपाही के व्यक्तित्व-सम्बंधी रूपों के सभी गुणों का अद्‌भुत संगम मिलता था, जो कि एक बेमिसाल उदाहरण है। नाहन (वर्तमान हिमाचल प्रदेश में) के नरेश मेदनी प्रकाश का वज़ीर अनंदपुर साहिब पधारा। उसने गुरु जी को नाहन आकर रहने-बसने का निमंत्रण-संदेश दिया। गुरु जी ने अपनी स्वीकृति देने के बाद उस राज्य के क्षेत्र में अपने पवित्र चरण धरकर 'पाउंटा साहिब' नामक नया नगर बसा दिया। भाई मनी सिंघ जी भी उन्हीं के साथ वहीं जा बसे।

२. युद्ध-वीरता के अनेक उदाहरण : भंगाणी में जो युद्ध हुआ, उसमें भाई मनी सिंघ जी ने अपनी युद्ध-कला के खूब जौहर दिखाए थे। इस युद्ध में आपका भाई हरी चंद खेत रहा था। *(पत्रिका 'संत सिपाही,' नवंबर १९९४, पृष्ठ २१)*

जब सन् १६९९ में वैसाखी पर्व के शुभ दिवस पर श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के द्वारा खालसे की सृजना का पवित्र और ऐतिहासिक काम सम्पन्न किया गया, तब भाई मनी सिंघ जी ने अपने सुपुत्रों और भाइयों के संग खंडे-बाटे की 'पाहुल' छकी थी।

अजमेर चंद बिलासपुरी ने जब अनंदपुर साहिब पर आक्रमण किया तब भी भाई मनी सिंघ जी वहीं पर उपस्थित थे। जब किला लोहगढ़ का युद्ध हुआ, तब उसमें भाई मनी सिंघ जी ने अपने सुपुत्र भाई बचित्तर सिंघ और भाई उदै सिंघ के साथ मिलकर पहाड़ी सेनाओं के विरुद्ध डटकर लड़ाई की थी और स्वयं बुरी तरह से घायल भी हो गए थे। इस युद्ध के उपरांत भाई जी श्री अमृतसर चले गए। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने भाई मनी सिंघ जी के लिए एक हुकमनामा लिखा और उनके परिवार आदि की गुरु-घर के प्रति सेवाओं के बदले उनके लिए 'फ़रजंदह ख़ानेज़ाद' शब्द लिखे थे। इसके बाद ये अनंदपुर साहिब आ गए थे। सन् १७०४ में जब अनंदपुर साहिब का अंतिम युद्ध हुआ, तब भी भाई मनी सिंघ जी वहीं उपस्थित थे और उनके अन्य सभी पारिवारिक बंधु भी गुरु जी के साथ उनकी सेवा कर रहे थे।

३. भाई मनी सिंघ जी की शहादत का कारण : भाई मनी सिंघ जी ने बंदी छोड़ दिवस (दीपावली) का त्यौहार श्री अमृतसर में मनाने के प्रयोजन से ५००० रुपये की राशि देने का वचन करके लाहौर के सूबेदार ज़करिया ख़ान से अनुमति ले ली थी। दूसरी ओर सूबेदार ज़करिया ख़ान की बदनीयत तो यह थी कि जब उत्साही सिक्ख श्री अमृतसर जाकर त्यौहार मनाने के प्रयोजन से वहां एकत्र हो जाएंगे, तब सहसा उन पर आक्रमण करके उन्हें समाप्त कर दिया जाएगा। ज़करिया ख़ान ने कलानौर वासी लखपत राय चोपड़ा को श्री अमृतसर को घेरा डालने के आदेश भी जारी कर दिए थे। भाई मनी सिंघ जी ने शासक की इस बदनीयत का पता चलते ही संगत को वहां आने से मना कर

दिया था। ज़करिया ख़ान को आज्ञा देने के बदले में देने के लिए देय-राशि एकत्र ही नहीं हुई, तो उसे भला वह राशि कैसे दी जा सकती थी! अत: भाई मनी सिंघ जी को उसके दो सुपुत्रों--- भाई चित्तर सिंघ और भाई गुरबख़श सिंघ के समेत गिरफ्तार कर लिया गया था। उसके बाद इन्हें लाहौर ले जाकर आषाढ़ सुदी ४ तिथि के दिन संवत् १७९१ (सन् १७३४) शाही किले के समीप चौंक नख़ास में उनके (बंद-बंद) अंग-अंग काटकर शहीद कर दिया गया था।

भाई मनी सिंघ जी की शहादत के ६८ वर्ष बाद भाई भीम सिंघ भट्ट ने भाई मनी सिंघ जी के घराने के प्रमुख शहीदों के सम्बंध में एक विशेष पउड़ी की रचना की थी, जिसका विवरण हमें भट्ट वही में इन शब्दों में मिलता है :

धंन धंन दयाल दास जस तऊ का, रिधि चुगत्ते देगे भीत धरिआ।
धंन धंन मनी सिंघ जस तऊका, बंद कटि पोशिस उखरिआ।
बचितर सिंघ जस तऊका गाऊं, सांहवे जूझा नहि तऊ डरिआ।
धंन धंन उदे सिंघ तऊका, दवादस घरीं इकला लड़िआ।

(भट्ट वही, तलउंढा, परगना जींद)

भट्ट अमर सिंघ की ही तरह भाई रत्न सिंघ (भंगू) ने अपने ग्रंथ 'प्राचीन पंथ प्रकाश' (पृष्ठ २२७) में भाई मनी सिंघ जी का महिमागान बहुत ही अनुपम और मनोरम शब्दों में इस प्रकार किया है :

सिक्खन मैं सिक्ख ऊचो, भगतन मैं भगत मूचो,
सिक्खी की निआई कहीए, भाई मनी सिंघ जी।
जगत मैं जै कार भयो, धरम अरथ देह दयो,
सिदक सों कटायो हीयो, न मानी कछू संक जी।
सिक्ख सो प्रसंन भए, दुशट सभ भ्रिशट भए,
गिआन की खड़ग सों, सो मारे चौरंग जी।
गुर सिख कहावै जोऊ, करनी यहि कमावै सोऊ,
मनी सिंघ तुल्ल भयो, को राणा औ न रंक जी।

शहादत : भाई कुइर सिंघ ने अपने ग्रंथ 'गुरबिलास पातशाही-१०' (पृष्ठ २९४) में भाई मनी सिंघ जी की शहादत का जो वर्ष संवत् १७९१ (सन् १७३४) दिया है, वही सही है। उन्होंने ये काव्यमयी पंक्तियां लिखी हैं :

संवत सत्रह सहस इकावन। मास अखाड़ सुकल बर पावन।
दहे बीच तुरकन को मेला। तब ही म्रित गुरू संग चेला ॥१२०३॥

भाई सेवा सिंघ भट्ट ने अपने ग्रंथ 'शहीद बिलास' में इस कथन की पुष्टि की है। भाई मनी सिंघ जी के साथ उनके दो सुपुत्र-- भाई चित्तर सिंघ और भाई गुरबख़श सिंघ के अलावा भाई मनी सिंघ जी के दो चचेरे भाई -- भाई संगत सिंघ और भाई रण सिंघ भी शहीद हुए थे। *(स्वरूप सिंघ कौशिश, 'गुरू कीआं साखीआं, भट्ट वही पूरबी-दक्खणी)*

भाई मनी सिंघ जी के दादा बल्लू के एक भाई दरिआ के सुपुत्र भाई आलम सिंघ को संवत् १७९१ (१७३४ ई) में आषाढ़ सुदी की तिथि ५ को, जब अभी केवल छह घड़ी दिन ही चढ़ा था, लवपुर (जो कि लाहौर का पुराना नाम था) के नख़ास चौंक में लाकर काजी के हुक्म से भाई मनी सिंघ जी के साथ शहीद किया गया था। भाई मनी सिंघ जी के भाई और कुछ अन्य सम्बंधी भी इसी दिन शहीद कर दिए गए थे। इस बात की पुष्टि, तलउंढा, परगना जींद की भट्ट वही से भी हो जाती है। ❂

भाई महाराज सिंह जी रब्बों

-*सिमरजीत सिंह**

पंजाब के लुधियाना ज़िला की पायल तहसील में मलौद-खन्ना सड़क के एक तरफ रब्बों ऊंचीं नाम के गांव में स. निहाल सिंह का जन्म हुआ जो बड़े होकर भाई महाराज सिंह के नाम से प्रसिद्ध हुए। उन्होंने भारत की आज़ादी के लिए संघर्ष करते हुए अंग्रेज सरकार की यातनायें झेलते हुए शहीदी प्राप्त की। भाई साहिब अपने गांव के पास ठीकरीवाल के निर्मलों के डेरे में कुछ समय रहकर बाबा तोता सिंह जी से गुरमति का ज्ञान प्राप्त करते रहे। बाबा तोता सिंह की प्रेरणा के साथ उन्होंने खंडे-बाटे की पाहुल प्राप्त की तथा आपका नाम टहिल सिंघ रखा गया। उनके मीठे स्वभाव से हर कोई प्रभावित होता था। हर किसी की बहुत सेवा करते तथा संगत में आए हर व्यक्ति को प्यार से 'महाराज जी' कहकर संबोधित करते रहते, जिस कारण आप जी को हर कोई 'महाराज' कहकर बुलाने लग गया। इस प्रकार आप भाई महाराज सिंघ के नाम से प्रसिद्ध हुए।

जवानी में पांव रखते ही आप जी का मिलाप भाई समुंद सिंघ नौरंगाबाद वाले से हुआ, जिनकी प्रेरणा सदका आप बाबा बीर सिंघ नौरंगाबाद वालों के पास चले गए। उनके पास रहकर आप जी ने गुरमति की विद्या प्राप्त की और साथ ही डेरे का प्रबंध देखते रहे।

महाराजा रणजीत सिंघ के अकाल चलाना कर जाने के बाद सिक्ख राज्य डोगरों एवं अंग्रेजों की चालों का शिकार हो गया। राज्य की हालत से अंदाजा लगाकर भविष्य के बारे में सोचकर हर सूझवान सिक्ख चिंतित था। राजा हीरा सिंघ ने महाराजा दलीप सिंघ के नाबालिग होने के बहाने सब अधिकार अपने हाथ में ले लिए। बाबा बीर सिंघ नौरंगाबाद वाले, जो इनकी चालों से भली-भांति वाकिफ थे, वे डोगरों द्वारा की जा रही नीच हरकतों तथा लाहौर के दरबार की खानाजंगी से बहुत दुखी थे। लाहौर दरबार में हीरा सिंघ डोगरों ने प्रधानमंत्री बनकर पंडित जल्ले से सलाह लेकर सिक्ख सरदारों, राजवंशियों तथा सेना के बहादुरों के प्रति अनादर का रुख अपना लिया। सिक्ख राज्य के बहुत सारे सरदार एवं शाही ख़ानदानों के सदस्य बाबा बीर सिंघ जी से अगुआई लेकर कार्य कर रहे थे। उन्होंने डोगरों से बचने के लिए बाबा बीर सिंघ जी के पास ज़िला तरनतारन के गांव सरहाली में आकर शरण ले ली। इस संकट की घड़ी में दो राजकुंवरों-- कुंवर कशमीरा सिंघ व कुंवर पिछौरा सिंघ ने भी बाबा बीर सिंघ जी के पास शरण ली हुई थी। उन दिनों में स. हरी सिंघ नलूआ का सुपुत्र स. जवाहर सिंघ, दीवान स. बिसाखा सिंघ तथा स. अतर सिंघ संधावालिया भी आप जी के पास पहुंच गए। हीरा सिंघ डोगरे ने बाबा जी को कहा कि वह इन सभी को लाहौर दरबार के हवाले कर दे परंतु बाबा जी ने इस तरह करने से इंकार कर दिया। सरहाली वाला बाबा बीर सिंघ जी का ठिकाना राजनीति मुठभेड़ का केंद्र बन गया।

**संपादक, 'गुरमति ज्ञान' एवं 'गुरमति प्रकाश'।*

हीरा सिंघ ने मीयां लाभ सिंघ को बीस हज़ार सैनिक और पचास तोपें देकर बाबा जी के निवास स्थान पर हमला करने के लिए भेज दिया। उस समय बाबा जी ने हरीके पत्तण के पास डेरे लगाए हुए थे। हज़ारों की गिनती में बाबा जी के पास श्रद्धालु बैठे हुए थे। ७ मई, १८४४ ई. को मीयां लाभ सिंघ ने बाबा जी को घेर लिया। जब आपके सैनिकों ने जवाबी कार्यवाही करने के लिए आज्ञा देने के लिए बाबा जी को विनती की तो बाबा जी ने अपने ही सिक्ख भाइयों पर हथियार उठाने से रोक दिया। लाहौर की सेना ने अंधाधुंध गोलाबारी शुरू कर दी, जिससे ४०० के लगभग व्यक्ति शहीद हो गए। २०० के लगभग अपनी जानें बचाने के चक्कर में दरिया में बह गए। बाबा जी समेत स. अतर सिंघ संधावालिया तथा कुंवर कशमीरा सिंघ शहीदी प्राप्त कर गए। चारों तरफ हाहाकार मच गयी।

बाबा जी की मृतक देह को जलप्रवाह कर दिया गया। उनका पलंग 'मुठियांवाला' गांव के पास दरिया के किनारे झाड़ियों में फंस गया। उस गांव का एक निहंग गंडा सिंघ नाव द्वारा लोगों को दरिया पार करवाने की सेवा करता था। उसने बाबा जी के मृत शरीर को पहचानकर गांव के लोगों को इकट्ठा कर लिया। गांव के लोगों ने बाबा बीर सिंघ का अंतिम संस्कार किया। बाबा जी की शहीदी की ख़बर चारों ओर फैल गयी। लोगों में बाबा जी का बहुत सत्कार था। इस हरकत के बदले लोगों ने लाहौर की सरकार को बुरा-भला कहना शुरू कर दिया, यहां तक कि लाहौर दरबार के सिपाहियों को लोग 'गुरू मारू' कहकर संबोधित करने लग गए।

बाबा बीर सिंघ जी के शहीद हो जाने के बाद बाबा महाराज सिंघ ने आप मिशन को आगे बढ़ाया। आप जी ने देशवासियों को अंग्रेजी व डोगरों की चालों के विरुद्ध लामबंद होने की प्रेरणा की। आप जी ने देश की आज़ादी के लिए संघर्ष जारी रखा। सन् १८४६ ई. की लड़ाई तक भाई साहिब नौरंगाबाद रहकर ही अपने फर्ज़ निभाते रहे। इसके बाद भाई महाराज सिंघ जी नौरंगाबाद का सारा प्रबंध बाबा खुदा सिंघ जी को संभालकर आप मुद्दियां वाले चले गए।

आप जी ने मुद्दियांवाले में बाबा बीर सिंघ जी की याद में स्थान बनवाया। कुछ समय वहीं रहकर आप श्री अमृतसर आ गए। श्री अमृतसर में समदू के तालाब नाम की जगह को अपना सदर मुकाम बनाया। भाई साहिब ने श्री हरिमंदर साहिब जाकर देश की आज़ादी के लिए हर तरह की कुर्बानी देने का प्रण लिया। आप जी श्री अमृतसर में रहते हुए आस-पास के गांवों में जाकर अपने मिशन का प्रचार करते रहे, जिससे इलाके के लोग जत्थेबंद होने लग गए। भाई साहिब के नाम का एक स्थान आज भी श्री अमृतसर में सुलतानविंड तथा चाटीविंड दरवाज़े के मध्य है।

भाई साहिब ने लोगों को सरगर्म किया, जिसका परिणाम 'प्रेमा मिशन' के रूप में सामने आया। प्रेमा व मोहरा दो भाई वज़ीराबाद के रहने वाले थे जो इस मिशन के प्रवर्त्तक थे। ये दोनों भाई पहले राजा गुलाब सिंघ डोगरा की सेवा में रह चुके थे। इनका मिशन यह था कि अंग्रेज रेज़ीडेंट हैनरी लारेंस व अंग्रेजों के अन्य हिमायती सरदारों को शालामार बाग की मीटिंग के समय २१ अप्रैल, १८४७ ई. को कत्ल कर दिया जाए। बाबा महाराज सिंघ ने इस मिशन के लिए प्रेमे को ही चुना था। उन्होंने इसको

एक सिरी साहिब भी भेंट की थी। इस मिशन में लाहौर के दरबार में कुछ प्रभावशाली सिक्ख सरदार तथा महारानी जिंदां भी शामिल थे। इन लोगों से भाई महाराज सिंघ का अथाह प्यार था और भाई साहिब ने इनको एक-एक सिरी साहिब भी भेंट की हुई थी। बदकिस्मती से इस घटना के बारे में अंग्रेजों को पहले ही पता चल गया। उन्होंने साजिशियों को पकड़ने के लिए सख़्त कार्यवाही शुरू कर दी। पूरे पंजाब में सिक्खों को पकड़ना शुरू कर दिया। साजिशियों तथा उनको पनाह देने वालों की जायदादें जब्त करने का सरकारी हुक्म लागू कर दिया गया। प्रेमे को जम्मू से गिरफ्तार कर लिया गया। इनको लाहौर लाया गया। हैनरी लारेंस ने गवर्नर जनरल को अपनी रिपोर्ट भेजकर लिखा कि प्रेमे नाम का एक व्यक्ति उसको अब तक चार बार मिल चुका है। वह कहता है कि भाई महाराज सिंघ, जो कि श्री अमृतसर का एक बा-रसूख सिक्ख संत है, इसके शक्की रवैये के बारे में उन्होंने पहले भी कई रिपोर्टें भेजी हैं। उसने प्रेमे को वही काम सौंपा हैं जिनके बारे में महारानी ने हुक्म दिया था। सरकार ने प्रेमे के मिशन को 'प्रेमा साजिश' का नाम दिया। इस समय यह स्वाभाविक ही था कि सरकार का ध्यान भाई महाराज सिंघ जी की तरफ जाता।

अंग्रेज रेज़ीडेंट ने भाई साहिब के बहुत सारे साथी गिरफ्तार कर लिए। इनसे भाई साहिब का पता-ठिकाना पूछने के बहाने उनको यातनाएं दी गईं। जब सख़्ती से कोई बात न बनी तो रेज़ीडेंट ने सारे माझे में से गांव-गांव जाकर भाई साहिब की तलाश करने का हुक्म दिया। श्री अमृतसर में जो भाई साहिब की जायदाद थी वह सारी जब्त कर ली गयी। उनकी सूचना देने वाले को सरकार द्वारा दस हज़ार रुपए का इनाम देने की घोषणा भी की गयी। ये सारी कार्यवाहियां भाई साहिब को आगे बढ़ने से न रोक सकीं। वे गांव-गांव जाकर अपने मिशन की कामयाबी के लिए कार्य करते रहे।

प्रेमा मिशन के असफल हो जाने के बाद दीवान मूलराज ने मुलतान में अंग्रेजों के विरुद्ध बगावत कर दी। दीवान सावण मल्ल का पुत्र दीवान मूलराज अपने पिता की तरह ही सिक्ख राज्य का वफ़ादार था। अंग्रेजों की सिक्ख विरोधी गतिविधियों के कारण उसके सम्बंध अंग्रेजों के साथ बिगड़ते जा रहे थे। अप्रैल, १८४८ ई में जब मूलराज ने अंग्रेज सरकार के विरुद्ध खुलेआम बगावत की तो महारानी जिंदां ने उसकी हर संभव सहायता की। अंग्रेजों ने उसको देश-निकाला दे दिया। इस मौके को पूरा सही जानकर भाई साहिब ने माझे में बगावत का एलान कर दिया। उन्होंने दोआबे में उत्तर की दिशा में कई गांवों के दौरे किए। हर जगह उनको काफी सहयोग मिला। इस समय दीवान मूलराज ने भी भाई साहिब के पास अपने आदमी भेजे। संदेशा मिलने पर भाई साहिब मुलतान की तरफ रवाना हो गए। मूलराज को भाई साहिब की मदद मिलने के कारण अंग्रेज सरकार भाई साहिब पर और ज्यादा भड़क उठी। अंग्रेजों ने भाई साहिब को गिरफ्तार करने के लिए अपनी मुहिम और तेज कर दी। कैप्टन कोकस नाम के एक अंग्रेज को दो और पलटनें, एक रजिमेंट तथा तोपखाने सहित भाई साहिब का पीछा करने के लिए भेजा गया। सरकार द्वारा हुक्म था कि जो भी पनाह दे उसके कान-नाक काट लिए जाएं और उसकी जायदाद जब्त कर ली जाए। मुलतान की बगावत में भाई साहिब ने दीवान मूलराज की अच्छी तरह से मदद की, किंतु जल्द ही उनका

मूलराज के साथ मतभेद हो गया। इन मतभेदों में एक मुख्य कारण यह था कि सिपाहियों को लड़ने के लिए दी जाती तनख्वाह बहुत कम थी। भाई साहिब मुलतान से वापस आ गए। उन्होंने जसवां व कट्ट लहिर के राजपूत राजाओं, ऊना के बाबा बिकरम सिंघ, करतारपुर के स. लद्धा सिंघ, नूरपुर के स. राम सिंघ तथा रंघड़ नंगल के स. लाल सिंघ एवं स. अरजन सिंघ को साथ लेकर नये सिरे से अंग्रेजों के विरुद्ध बगावत का संगठन कर लिया। किसी ने सर जान लारेंस के पास चुगली की कि भाई साहिब तथा निहंग गंडा सिंघ उसको मारना चाहते हैं। अंग्रेजों ने निहंग गंडा सिंघ को श्री अमृतसर से गिरफ्तार करके फांसी दे दी। भाई साहिब को लारेंस से मुलाकात करवाने के लिए गिरफ्तार करके लाहौर ले जाया जा रहा था परंतु वे समदू के पुल से आलोप हो गए।

उसके बाद भाई साहिब ने अटारी वाले सरदारों के साथ मिलकर अंग्रेजों के विरुद्ध नई लहिर लामबंद की। स. चतर सिंघ अटारी वाला इस बगावत का प्रर्वत्तक था। रामनगर चेलियांवाला और गुजरात की सभी लड़ाइयों में भाई साहिब अपनी काली घोड़ी पर बैठकर बहादुरी से लड़े। हज़ारों अज़ादी घुलाटिये उनकी प्रेरणा का सदका इन लड़ाइयों में शामिल हुए। चेलियांवाला में अंग्रेजों को जो हार का मुंह देखना पड़ा उसमें विशेष हाथ भाई महाराज सिंघ का ही था। अंग्रेज कमांडर गफ़ को इस हार के कारण वापिस बुला लिया गया तथा उसकी जगह पर नेपियर को भेजा गया।

गुजरात की लड़ाई में अंग्रेज भारी रहे, जिस कारण भाई साहिब अटारी वाले सरदारों तथा बाबा बिकरम सिंघ ऊना वालों के साथ रावलपिंडी की तरफ चले गए। जनरल गिलबर्ट ने १५००० जवान तथा भारी तोपखाना लेकर इनका पीछा किया। भाई साहिब एक बार फिर रावलपिंडी या सन अब्दाल में अंग्रेजों के साथ दो हाथ चाहते थे। फरवरी, १८४९ ई में भाई साहिब जी ने ८० वर्ष की आयु में सिक्ख कैदियों की प्रेरणा की और सिक्ख फौजें जंग के मैदान में डट गयीं। जलंधर के कमिश्नर मकलोड के अनुसार भाई महाराज सिंघ साधारण लोगों में अपना महत्त्वपूर्ण प्रभाव रखते थे। वे अपनी किसी भी योजना को अमली रूप दे सकते थे।

पंजाब में लगभग अंग्रेजों का कब्जा हो चुका था। भाई साहिब ने अंदाज़ा लगा लिया था कि अब पंजाब उनके लिए सुरक्षित नहीं है और वे जम्मू की तरफ चले गये। जम्मू से वो भिंवर चले गए व भिंवर से अखरूर तथा यहां से देवी वटाला चले गये। यह इलाका जंगलों से घिरा हुआ था। उन्होंने देवी वटाला व चंबी दो स्थानों को अपना ठिकाना बनाया। पंजाब एवं जम्मू से सैकडों की गिनती में आज़ादी घुलाटिये उनके पास इकट्ठा होने लगे। भाई साहिब ने आज़ादी की लड़ाई को जारी रखा। जम्मू-कश्मीर के हाकिम इस समय सिक्ख राज्य के द्रोही डोगरे थे। भाई साहिब ने पहले इन देश-द्रोहियों से निपटने की योजना बनाई। उन्होंने चंबी के पास रामनगर के किले पर हमला करके यह किला अपने कब्जे में ले लिया। डोगरों ने पूरा ज़ोर लगाकर भाई साहिब को दबाने की कोशिश की। भाई साहिब के साथी एक बार फिर बिखर गए तथा भाई महाराज सिंघ भी अगस्त, १८४९ ई में जम्मू-कश्मीर छोड़कर पंजाब में बटाला के पास जसोवाल आ गए। जब अंग्रेज़ सरकार को पता चला तो उन्होंने भाई साहिब की गिरफ्तारी का वारंट जारी कर दिया तथा गिरफ्तार करवाने वाले को

इनाम देने की घोषणा की। भाई साहिब रूपोश हो गए तथा देश की अनेकों जगह पर जा-जाकर लोगों को आज़ादी के प्रति संघर्ष करने के लिए प्रेरणा करते रहे।

भाई साहिब ने एक बार फिर महाराजा दलीप सिंघ को अंग्रेजी प्रभाव से मुक्त करवाने की योजना बनायी। उन्होंने बीस जाने-माने दिलेर सरदार इस काम के लिए चुने। इनमें से प्रमुख कमाडेंट स. प्रेम सिंघ, स. राम सिंघ रावल, स. बूटा सिंघ, स. जवाहर सिंघ सरहाली, स. महिताब सिंघ नौशहिरा, स. भूप सिंघ तथा स. दल सिंघ शामिल थे। भाई साहिब ने अंग्रेज सरकार के विरुद्ध बगावत करने तथा अचानक गदर मचाने के लिए ३ जनवरी, १८५० ई का दिन निर्धारित किया, जिसके अनुसार जलंधर व होशियारपुर की फौजी छावनियों में अचानक विद्रोह किया जाना था, परंतु ६ दिन पहले २८ दिसंबर को तरनतारन तहसील के नगर ढोटीयां के एक रतन सिंघ जासूस ने डिप्टी कमिशनर हैनरी वैनीस्टार्ट को ख़बर देकर भाई साहिब को गिरफ्तार करवा दिया। भाई साहिब इस समय शामचुरासी व आदमपुर के मध्य खेतों के पास एक झिड़ी में पनाह लिए बैठे थे। भाई साहिब का एक साथी अमीर सिंघ इस मुठभेड़ में शहीदी प्राप्त कर गया। भाई साहिब को २१ साथियों समेत गिरफ्तार कर लिया गया।

भाई साहिब को जलंधर, कोलकाता की जेलों में सख़्त यातनाएं दी जाती रहीं। भाई साहिब को खतरनाक बागी समझते हुए उनको सिंगापुर की जेल में भेजने का फैसला किया गया। १५ मई, १८५० ई को 'मोहम्मद शाह' समुद्री जहाज द्वारा भाई साहिब को उनके कुछ साथियों के साथ रवाना कर दिया गया। ९ जून, १८५० ई को भाई महाराज सिंघ जी व स. खड़क सिंघ को सिंगापुर के रेंजीडेंट मिस्टर टी. चर्च के हवाले कर दिया गया। सिंगापुर की जेल में जहां इनको रखा गया, वहां भी विशेष पहरे का प्रंबध किया गया। इन कैदियों के कमरों की खिड़कियां ईंटों से बंद कर दी गयीं। बरामदे को एक मज़बूत लोहे के दरवाजे से बंद कर दिया गया। जेल सुप्रिंटेंडेंट वैनिसटार्ट को भी उनके बारे में कहना पड़ा कि मैं चाहता था कि इस आदमी की गौरवता को नज़रंदाज कर डालूं और इसके साथ आम कैदियों की तरह व्यवहार करूं, किंतु इसके ऊंचे-सुच्चे धार्मिक जीवन के सामने मेरी ऐसा करने की हिम्मत नहीं पड़ी और न ही मैं ऐसा करके महान सिक्ख कौम की क्रोपी मोल ले सकता हूं।

जेल में पहले उनकी आंखों की ज्योति खत्म हो गयी तथा बाद में कैंसर की भयानक बीमारी ने घेर लिया। असिस्टेंट सर्जन जे. कौपर ने अपनी रिपोर्ट में लिखा कि पिछले दो महीनों से भाई महाराज सिंघ की सेहत बिगड़ गयी है। उनकी ज़ुबां पर बाईं ओर कैंसर का फोड़ा हो गया है, जिस कारण उनका बहुत सारा खून निकल चुका था। उनकी गर्दन के बाईं ओर गिलटियां फूल आई हैं, उनमें भी कैंसर की शिकायत है। दो-तीन सप्ताह से उन्होंने बहुत थोड़ा खाना खाया है। कैंसर के फोड़े की बदबू बहुत घृणा वाली थी जो पूरे कमरे में फैली हुई थी। ८६ वर्ष की उम्र में जेल में ही ५ जुलाई, १८५६ ई को आप जी का देहांत हो गया। बाद में उनकी याद में एक स्थान भी बनाया गया। एक निष्पक्ष अंग्रेज इतिहासकार मिस्टर आर्नोल्ड ने लिखा है कि अगर २८ दिसंबर को भाई साहिब को न पकड़ा जाता तो पंजाब अंग्रेजों के हाथों से निकल जाना था। ज़िक्रयोग्य है कि पंजाब में भारत की

आज़ादी के लिए लड़ाई अंग्रेजों के पंजाब में पैर रखने के समय ही शुरू हो गयी थी जिससे प्रेरणा लेकर आगे १८५७ ई की कौमी देश-भक्तों की आज़ादी-प्राप्ति के लिए एक लहर ने जन्म लिया तथा अंत में सन् १९४७ ई में जीत प्राप्त करके इस मिशन को पूरा करके आज़ादी का परचम लहराया। इस संघर्ष के पीछे भाई महाराज सिंघ जी जैसे महान शूरवीर के ऐतिहासिक योगदान को कभी आंखों से ओझल नहीं किया जा सकता।

भाई महाराज सिंघ के श्री अमृतसर वाले स्थान की मौजूदा समय में सेवा-संभाल कर रहे बाबा हरदीप सिंघ जी के अनुसार बाबा महाराज सिंघ जी को जलावतन किए जाने के बाद इस स्थान की सेवा बाबा रघबीर सिंघ जी करते रहे। बाबा रघबीर सिंघ जी के दो अन्य भाई-- बाबा नानक सिंघ एवं बाबा जोगिंदर सिंघ उनके साथ सहयोग करते रहे। बाबा नानक सिंघ नरूड़ गांव में फैली छूत की बीमारी में रोगियों की सेवा-संभाल करते हुए अकाल चलाना कर गए। उनके घर एक पुत्र स. रिपुदमनजीत सिंघ का जन्म हुआ था। बाबा रघबीर सिंघ का अनंद कारज श्री अमृतसर निवासी माता दया कौर जी के साथ हुआ। इनके घर दो पुत्र-- बाबा बीर बिक्रमाजीत सिंघ तथा बाबा बलवीर सिंघ जी का जन्म हुआ। बाबा बिक्रमाजीत सिंघ के घर दो पुत्र-- कुंवर नौनिहाल सिंघ तथा स. गुरराजपाल सिंघ का जन्म हुआ। स. गुरराजपाल सिंघ के घर तीन पुत्र-- स. बिजैपाल सिंघ, स. सिमरनपाल सिंघ तथा स. अजैपाल सिंघ का जन्म हुआ। इनमें से स. अजैपाल सिंघ सबसे बड़े थे, जिनका बचपन में ही देहांत हो गया था। कुंवर नौनिहाल सिंघ के घर स. गुरप्रताप सिंघ टिक्का, स. यादविंदर सिंघ तथा स. सतिंदरपाल सिंघ का जन्म हुआ। ये सारे आजकल श्री अमृतसर में निवास रख रहे हैं। बाबा बलबीर सिंघ के घर तीन पुत्र-- स. खड़क सिंघ, स. हरदीप सिंघ तथा स. जसविंदर सिंघ (लाली) का जन्म हुआ। स. जसविंदर सिंघ (लाली) जो आजकल पटियाला में निवास रख रहे हैं, के घर स. करनबीर सिंघ ने जन्म लिया। स. खड़क सिंघ के घर एक पुत्र स. राजबहादर सिंघ ने जन्म लिया। स. हरदीप सिंघ के घर दो पुत्रों-- स. प्रितपाल सिंघ तथा स. रविइंदर सिंघ ने जन्म लिया।

कविता

मैं हूं तुम्हारा, तुम ही निभाओ!

अरदास को मेरी, सफल बनाओ ! मुझ पर प्रभु, कृपा बरसाओ !
विषयों में डूबूं, तुम ही बचाओ ! माया की आसक्ति से, तुम छुड़ाओ !
भक्ति-भाव सूखे, उसे सरसाओ ! भक्ति को श्रद्धा का, अमृत पिलाओ !
मन दौड़े इत-उत, एक ठौर लाओ ! इस मनमौजी पे, पहरा बिठाओ !
अच्छा ही सोचूं, वो बुद्धि बनाओ ! पाप से हटाओ, पुण्य में लगाओ !
साथ न छोड़ो, दूर न जाओ ! ठोकर न लगे, वो राह दिखाओ !
राहें बहुत सी भरमाएं मुझको, दुविधा मिटाकर, सुमार्ग दिखाओ !
जीवन में आशा की, ज्योति जलाओ ! कंधे झुके हैं, उत्स जगाओ !
दुखों को सहने की, शक्ति बढ़ाओ ! पापों से लड़ने को, पक्का बनाओ !
मैं दीन हूं तुम हो दीनबंधु, बंधु को अपने, मत बिसराओ !
शरण में आया हूं, मत ठुकराओ! मैं हूं तुम्हारा, तुम ही निभाओ !

-श्री प्रशांत अग्रवाल, ४०, बजरिया मोतीलाल, बरेली-२४३००३ (उ. प्र.); मो : ०९४११६०७६७२

गुर सिखी बारीक है---२६

*-डॉ. सत्येंद्रपाल सिंघ**

परमात्मा द्वारा रचित सृष्टि अत्यंत विचित्र और समझ से परे है। उसने सुख दिया है तो दुख भी साथ जोड़ दिया है। संयोग है तो वियोग भी है। आनंद के साथ विषाद और स्थिरता से अस्थिरता का योग बना दिया है। सृजन है तो विनाश भी है। संसार परमात्मा के लिए एक खेल की तरह है, किंतु जीव के लिए एक गूढ़ पहेली है जिसे सुलझाने में सारा जीवन सुख-दुख के थपेड़ों के बीच गुज़र जाता है। गुरु की शरण में जाकर सहज ही जीवन की राह मिल जाती है :

नानक बिजुलीआ चमकंनि घुरन्हि घटा अति कालीआ ॥
बरसनि मेघ अपार नानक संगमि पिरी सुहंदीआ ॥
(पन्ना ११०२)

जो सतिगुरु की शरण में नहीं आया है उसके लिए जीवन घनघोर बादलों से घिरी काली रात की तरह है, जिसमें रह-रहकर बिजली चमक रही है और भय उत्पन्न कर रही है। भारी बरसात ने जीवन को ठिठका दिया है। ऐसे में सुख उसको ही है जिसके मन में परमात्मा के प्रेम का रस-निर्झर बह रहा है, जो परमात्मा से जुड़कर एकाकार हो गया है। जीवन को विभिन्न रूपों में परिभाषित किया जाता है। कोई इसे विष प्याले के समान, कोई कठिन डगर की तरह, कोई दुखों के पहाड़ की तरह समझता है। गुरु साहिबान ने समस्त शंकाओं, दुविधाओं का निवारण करते हुए उज्जवल राह दिखायी कि मन में परमात्मा का प्रेम हो तो जीवन आनंद का अवसर बन जाता है।

भाग सुलखणा हरि कंतु हमारा राम ॥
अनहद बाजित्रा तिसु धुनि दरबारा राम ॥
आनंद अनदिनु वजहि वाजे दिनसु रैणि उमाहा ॥
तह रोग सोग न दूखु बिआपै जनम मरणु न ताहा ॥
(पन्ना ८४६)

संसार में कौन ऐसा है जो नहीं चाहता कि उसके सारे रोग, शोक और दुख समाप्त हो जाएं और आवागमन के फेर से मुक्ति मिल जाए? कौन नहीं चाहता कि दिन-रात उसके जीवन में आनंद की उमंग बनी रहे और उसका भाग्य चमक उठे? जो इस भ्रम में रहते हैं कि बड़ी सम्पत्ति, हीरे-जवाहरात, रत्न, ऊंची पदवी, शक्ति, वंश आदि से भाग्य का उदय होता है उन्हें अंततः निराशा और दुख ही प्राप्त होता है। गुरु साहिबान ने कहा कि बड़े भाग्य वाला वही है जिसने परमात्मा को धारण कर लिया है। उससे जुड़कर जीवन अनवरत आनंद से गुंजित हो उठता है। गुरसिक्ख वही है जो सतिगुरु के बताए मार्ग पर चलकर परमात्मा के प्रेम को अपने जीवन का आचार-विचार बना लेता है; मन में परमात्मा का प्रेम-भाव बसाकर जीवन आचरण भी प्रेममयी कर लेता है।

पहिला गुरमुखि जनमु लै भै विचि वरतै होइ इआणा।
गुर सिख लै गुरसिखु होइ भाइ भगति विचि खरा सिआणा।

**E-१७१६, राजाजीपुरम, लखनऊ-२२६०१७, मो : ९४१५९६०५३३*

गुर सिख सुणि मंनै समझि माणि महति विचि रहै निमाणा।
गुर सिख गुरसिखु पूजदा पैरी पै रहरासि लुभाणा।
गुर सिख मनहु न विसरै चलणु जाणि जुगति मिहमाणा।
गुर सिख मिठा बोलणा निवि चलणा गुरसिखु परवाणा।
घालि खाइ गुरसिख मिलि खाणा ॥
(भाई गुरदास जी, वार ३२:१)

गुरसिक्ख परिवार में जन्म लेना ही पर्याप्त नहीं है एक गुरसिक्ख बनने के लिए। गुरसिक्ख परमात्मा से प्रेम करना सीखे। इसके लिए उसे स्वयं की बुद्धि, चतुरता, कौशल का त्याग करके, असूझ बनकर परमात्मा से जुड़ना होगा, स्वयं को उससे प्रीति के योग्य सिद्ध करना होगा, सतिगुरु की मति को बड़े सूझवान की तरह धारण करना होगा। भाई गुरदास जी बात को बड़ी सूक्ष्मता से समझाते हैं कि गुरसिक्ख सतिगुरु की मति को ध्यानपूर्वक सुने और उसे पूरी तरह समझकर उसका पालन करे।

आज समय की मांग है कि हर गुरसिक्ख इस कसौटी पर स्वयं को कसकर देखे। वैयक्तिक रूप से या संगत में बैठकर गुरबाणी कितनी एकाग्रता से पढ़ी व सुनी जाती है, इस पर विचार करना होगा। गुरसिक्ख की मर्यादा है कि वह गुरबाणी को ध्यानपूर्वक पढ़े-सुने और उसके सारतत्व को समझ का तदनुकूल पालन करे। इस विचार के साथ भाई गुरदास जी ने अगली अवस्था का विचार भी जोड़ दिया कि परमात्मा को मन और आचरण से धारण करने के बाद उसे जो सुख-फल प्राप्त होता है उसका कभी भी मान न करे और मान-रहित अर्थात् विनम्र-भाव में रहे। यह अत्यंत कठिन है कि कुछ उपलब्धि प्राप्त हो और मनुष्य के मन में अभिमान न पैदा हो। इस अभिमान ने बड़े-बड़े साधकों की वर्षों की साधना को निर्मूल कर दिया है। गुरसिक्ख इससे बचने के लिए गुरमति को अति पावन मानकर उसमें अपनी आस्था को दृढ़ करता है और गुरमति के भाव को अपने मन में सदैव जीवंत रखता है। सतिगुरु की मति के लिए उसके मन में सदैव रीझ बनी रहती है। गुरसिक्ख कभी नहीं भूलता कि उसके पास समय सीमित है और संसार में वह एक जाने वाले मेहमान की तरह ही है, इसलिए इस अवसर का पूरा सदुपयोग करना है। उसकी रसना पर सदैव सर्वहित के वचन होते हैं। अपने को वह सदा परमात्मा के हुक्म में रखता है और सतिगुरु की मति को सदैव शिरोधार्य करता है। इस अवस्था में पहुंचा हुआ गुरसिक्ख सबके हित की सोचता है, पूरे संसार के उद्धार का माध्यम बनता है।

गुर दरसनि उधरै संसारा ॥
जे को लाए भाउ पिआरा ॥
भाउ पिआरा लाए विरला कोइ ॥
गुर कै दरसनि सदा सुखु होइ ॥
गुर के दरसनि मोख दुआरु ॥
सतिगुरु सेवै परवार साधारु ॥ (पन्ना ३६१)

गुरु-दर्शन से ही संसार का उद्धार होता है, मगर गुरु-दर्शन की ललक किसी विरले के ही मन में उत्पन्न होती है। गुरु-दर्शन द्वारा आनंद (सुख) की स्थिति बन जाती है। गुरु-दर्शन से ही मुक्ति-द्वार मिलता है। सच्चे गुरु की सेवा बिना किसी भेदभाव के सभी के हित पूरे करने वाली होती है।

वह गुरसिक्ख ही क्या जिसके मन में गुरु-दर्शन का चाव न हो। हर गुरसिक्ख के मन में स्वाभाविक उमंग होती है गुरु-दर्शन की।

दर्शन का वास्तविक तात्पर्य समझ में आ जाने पर और उसे धारण कर लेने पर सुख की प्राप्ति होती है। परमात्मा का स्वरूप ही मनमोहक है। जितना मनमोहक स्वरूप है उतना ही सुखदायक उसका प्रभाव है। परमात्मा के दर्शन से सारे विकार दूर हो जाते हैं :

मोरी अहं जाइ दरसन पावत हे ॥
राचहु नाथ ही सहाई संतना ॥
अब चरन गहे ॥१॥ रहाउ ॥
आहे मन अवरु न भावै चरनावै चरनावै उलझिओ अलि मकरंद कमल जिउ ॥
अन रस नही चाहै एकै हरि लाहै ॥१॥
अन ते टूटीऐ रिख ते छूटीऐ ॥
मन हरि रस घूटीऐ संगि साधू उलटीऐ ॥
अन नाही नाही रे ॥
नानक प्रीति चरन चरन हे ॥ *(पन्ना ८३०)*

वास्तव में गुरु-दर्शन करना वो है जिससे अहंकार आदि मन के सारे विकार दूर हो जाएं और मन सम्पूर्ण रूप से परमात्मा में रच-बस जाए। मन में परमात्मा की ऐसी रीझ पैदा हो जैसी भंवरे के मन में मकरंद के प्रति होती है, जिसके चलते वह बार-बार कमल के पुष्प की ओर आकर्षित होता है। गुरसिक्ख के मन में भी परमात्मा की प्रीति वैसे ही गहरी होती जाती है तथा अन्य कोई भी बात उसे भली नहीं लगती। वह सांसारिक कामनाओं, आकर्षण से विरक्त हो जाता है और काल के भय से भी मुक्त हो जाता है। उसे सत और असत में भेद करना आ जाता है, जिससे परमात्मा-प्रेम का भाव उसमें दृढ़ से दृढ़तर होता जाता है। यदि परमात्मा के अतिरिक्त कहीं और भी अपने मन की आस्था को टिका रहे हैं तो गुरु-दर्शन से वंचित ही हैं। यदि विकार मन से नहीं जा रहे हैं तो गुरु-चरणों से दूरी अभी बनी हुई है।

गुरसिक्ख जानता है कि परमात्मा की शरण के बिना कहीं भी उद्धार नहीं है, कहीं भी सुख नहीं है। जिसने परमात्मा के अतिरिक्त कहीं अन्य अपनी आस्था टिका ली है और गुरमति की अनदेखी कर रहा है तो वह गुरसिक्ख नहीं है। सहज-सी बात है कि जिसने इस संसार की रचना की है वही संसार के जंजाल से मुक्त कर सकता है :

आतम रामु संसारा ॥ साचा खेलु तुम्हारा ॥
सचु खेलु तुम्हारा अगम अपारा तुधु बिनु कउणु बुझाए ॥
सिध साधिक सिआणे केते तुझ बिनु कवणु कहाए ॥
कालु बिकालु भए देवाने मनु राखिआ गुरि ठाए ॥
नानक अवगण सबदि जलाए गुण संगमि प्रभु पाए ॥ *(पन्ना ७४६)*

संसार परमात्मा की रचना है और परमात्मा उसमें प्रकट है। इस खेल का रहस्य उसे ही पता है। उसे अपनी बुद्धि, युक्ति से नहीं उसकी कृपा से ही समझा जा सकता है। इसके लिए मन को परमात्मा पर टिकाकर, गुरु शबद के अवगुणों-विकारों से ऊपर उठकर परमात्मा से मिलन के योग्य बना जा सकता है। इस तरह गुरसिक्ख की परमात्मा के मार्ग पर चलने की यात्रा विकारों से मुक्ति और सद्गुणों के विकास की यात्रा है। सतिगुरु के दर्शन से इस यात्रा का आगाज़ होता है और उसकी कृपा से ही यह अंजाम तक पहुंचती है।

सतिगुरि मिलिऐ आपु गइआ त्रिभवण सोझी पाई ॥
निरमल जोति पसरि रही जोती जोति मिलाई ॥५॥
पूरै गुरि समझाइआ मति ऊतम होई ॥
अंतरु सीतलु सांति होइ नामे सुखु होई ॥
(पन्ना ४२४)

इस आशय के अनुसार सतिगुरु के दर्शन का अर्थ है -- आत्मिक विकास। यदि विकार

दूर हो गये, संसार के सच का ज्ञान हो गया, मन निर्मल होकर परमात्मा में रम गया, मति सतिगुरु की मति के अनुकूल हो गई, अंतर की सारी तृष्णाएं, कामनाएं, वासनाएं शांत हो गईं और उद्विग्नता-दुविधा समाप्त हो गई तब गुरसिक्ख समझे कि उसे सतिगुरु के दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हो गया। परमात्मा के नाम-सिमरन में उसे सुख प्राप्त होने लगता है। एक गुरसिक्ख जब गुरु-घर जाए तो उक्त अवस्था की कामना लेकर सतिगुरु के दर्शन को जाए तो गुरसिक्खी के मार्ग पर उसका यह पहला और ठोस कदम होगा। गुरसिक्ख एक भिखारी की तरह परमात्मा से याचना करे कि उसके विकार दूर हों।

सतिगुर भीखिआ देहि मै तूं संम्रथु दातारु ॥
हउमै गरबु निवारीऐ कामु क्रोधु अहंकारु ॥
लबु लोभु परजालीऐ नामु मिलै आधारु ॥
अहिनिसि नवतन निरमला मैला कबहूं न होइ ॥
नानक इह बिधि छूटीऐ नदरि तेरी सुखु होइ ॥
(पन्ना ७९०)

गुरसिक्ख गुरु-घर में एक याचक की तरह सतिगुरु के दर्शन को जाए और एक ही उद्देश्य के साथ जाए कि समर्थ सतिगुरु उसके विकारों का नाश करके, लोभ-मोह से ऊपर उठाकर अपने नाम का आश्रय देंगे। ऐसे उसका अंतर सदैव निर्मल रहेगा। सतिगुरु की इस तरह की कृपा से माया से छुटकारा मिल सकेगा और सच्चे गुरु की प्राप्ति होगी।

आज हमारे सामने जो सवाल हैं, चिंताएं हैं, उनका एकमात्र हल उपरोक्त याचना में है। हर गुरसिक्ख का मन निर्मल हो, विकारों से मुक्त हो, वो सतिगुरु के दरबार का दीन-हीन याचक बने, तो उसका मस्तक तो शान से ऊंचा होगा ही, मानव-कल्याण का भी बड़ा कदम होगा। सतिगुरु की आज्ञा का पालन करना हर गुरसिक्ख का धर्म है :

गुर का कहिआ जे करे सुखी हू सुखु सारु ॥
गुर की करणी भउ कटीऐ नानक पावहि पारु ॥
(पन्ना १२४८)

महान बलिदानी भाई तारू सिंघ जी

(पृष्ठ ३३ का शेष)

को झूठी शिकायतें करके भाई तारू सिंघ जी को गिरफ्तार करवा दिया। जकरिया ख़ान ने भाई तारू सिंघ जी को इसलाम न कबूल करने पर सज़ा देने का भय दिखाया, परंतु भाई तारू सिंघ जी ने *"जान जाये पर धर्म न जाये"* कहकर स्पष्ट इंकार कर दिया।

सूबेदार ने दो मोची बुलाकर भाई तारू सिंघ जी की केशों सहित खोपड़ी उतारने का फरमान जारी कर दिया। सरेआम रंबी से भाई तारू सिंघ जी की केशों सहित खोपड़ी उतार दी गई। सारा शरीर लहू-लुहान हो गया। लोग यह दर्दनाक दृश्य देखकर भयभीत हो गए। भाई तारू सिंघ जी ने "सिखी केसां-सवासां नाल निबाही। वे धर्म की शान को बरकरार रखते हुए शहीद हो गए।

भाई तारू सिंघ जी की शहादत सिक्ख इतिहास की एक अनुपम मिसाल है जो स्वर्ण अक्षरों से अंकित है।

शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के अध्यक्ष साहिबान : १०

जत्थेदार ऊधम सिंघ नागोके

*-स. रूप सिंघ**

जत्थेदार, श्री अकाल तख़्त साहिब की पदवी तथा अध्यक्ष, शिरोमणि गु. प्र. कमेटी, श्री अमृतसर के सम्मानजनक पद पर विराजमान रहे जत्थेदार ऊधम सिंघ गांव 'नागोके' की ज़रखेज़ धरती पर फले-फूले एवं प्रवान चढ़े। शूरवीर, धर्मी, जरनैल, सिक्खी-सिदक-भरोसे में परिपक्व, कुर्बानी के जज़्बे से भरपूर जत्थेदार ऊधम सिंघ का जन्म २८ अप्रैल, १८९४ ई को स. बेला सिंघ तथा माता अतर कौर के घर गांव नागोके, ज़िला श्री अमृतसर में हुआ। इनकी पारिवारिक पृष्ठभूमि महाराजा रणजीत सिंघ जी की अकाली फौज के साथ जुड़ती है। इनके माता-पिता सिक्खी जीवन-जाच के धारणी बड़े जमींदार थे। धार्मिक विद्या व सिक्खी जीवन की जन्म-घुट्टी इनको परिवार से प्राप्त हुई। लंबा कद, चौड़ी छाती ले जन्मे जत्थेदार ऊधम सिंघ मानो कौम व देश-सेवा के लिए धर्मी शूरवीर पैदा हुए हों। स्कूली शिक्षा इन्होंने प्राइमरी तक प्राप्त की। प्रथम विश्व युद्ध के समय फौज में जवान भर्ती हो गए, परंतु अंग्रेज हकूमत की गुलामी को ज्यादा देर प्रवान करने के लिए इनका मन न माना। १९१८ ई में स्वेच्छा से सरकार की नौकरी छोड़ दी। इनका अनंद कारज (विवाह) गांव ढिलवां, ज़िला कपूरथला में हुआ। घर में अभी कोई बच्चा भी नहीं हुआ था कि इनकी धर्म पत्नी अकाल चलाना कर गयी। इन्होंने दूसरा विवाह करना उचित न समझा।

१९१९ ई. में अमृत की दात प्राप्त कर सिक्ख जागृति लहर-- सिंघ सभा लहर में शामिल हो गए। प्रभावशाली शख़्सियत एवं सिक्खी जज़्बे के कारण जत्थेदार ऊधम सिंघ को सफल प्रवक्ता होने का गौरव प्राप्त हुआ। उन्होंने खडूर साहिब के ऐतिहासिक गुरुद्वारा साहिब के प्रबंधक के रूप में काफी समय सेवा की। इस समय महंतों, पुजारियों की गुंडागर्दी तथा अंग्रेज सरकार की तानाशाह नीति से गुरुधामों को आज़ाद करवाने के लिए गुरुद्वारा प्रबंध सुधार लहर चल रही थी, जिसमें जत्थेदार ऊधम सिंघ तन-मन-धन से शामिल हो गए। जलियांवाला बाग व ननकाणा साहिब के खौफनाक खूनी साके ने इनको तन-मन से बेचैन कर दिया। चाबियों के मोर्चे में गिरफ्तार होकर छः महीने काल-कोठड़ी में काटे और आखिरी कैदी के रूप में रिहा हुए। गुरु का बाग के मोर्चे के समय जत्थेदार साहिब अंग्रेज हकूमत एवं महंतों-पुजारियों की धक्केशाही का शिकार हुए, जिस कारण इनको दो वर्ष की जेल काटनी पड़ी व २०० रुपए नकद जुर्माना अदा करना पड़ा।

जत्थेदार ऊधम सिंघ के गुरु-ग्रंथ व गुरु-पंथ को समर्पित धर्मी जीवन को सम्मुख रखते हुए अति नाजुक समय-- १९२३ ई में इनको जत्थेदार, श्री अकाल तख़्त साहिब की पदवी पर नियुक्त किया गया। बतौर जत्थेदार, श्री अकाल तख़्त साहिब जत्थेदार ऊधम सिंघ ने गंगसर जैतो जाने के लिए पहले जत्थे की अगुआई करनी थी, परंतु अंग्रेज हकूमत ने एक दिन पहले ही इनको ८ फरवरी, १९२४ ई को बंदी बनाकर जेल में बंद कर दिया। इस मोर्चे के समय ये दो वर्ष तक मुलतान जेल में बंद रहे। १९२६ ई में जेल से रिहाई के उपरांत दोबारा जत्थेदार साहिब ने जत्थेदार, श्री अकाल तख़्त साहिब की सेवा संभाली।

**सचिव, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर-१४३००१; मो. ९८१४६-३७९७९*

शिरोमणि गु. प्र. कमेटी के सिक्ख गुरुद्वारा कानून के अनुसार हुए पहले चुनाव के समय ये सदस्य चुने गए तथा १९५४ ई. तक चुने हुए या नामज़द सदस्य के रूप में सेवा निभाते रहे। ४ सितंबर, १९२६ ई. को हुए शिरोमणि गु. प्र. कमेटी के पहले जनरल इजलास के समय जत्थेदार ऊधम सिंघ बतौर जत्थेदार, श्री अकाल तख़्त साहिब शामिल थे। १९२९ ई. में हुए किसान आंदोलन के समय भी जत्थेदार ऊधम सिंघ ने आगे बढ़कर हिस्सा लिया तथा एक वर्ष तक जेल-यात्रा की। इंडियन नेशनल कांग्रेस द्वारा चलाई गई सिविल न-फरमानी लहर के समय इनको फिर गिरफ्तार करके एक वर्ष के लिए जेल में बंद कर दिया। ये १९३० ई. से १९३३ ई. तक श्री दरबार साहिब कमेटी के सदस्य भी रहे। इस समय इनके यत्न का सदका गुरु रामदास सराय की विशाल इमारत बननी आरंभ हुई।

१ नवंबर, १९२९ ई. को पहली बार जत्थेदार ऊधम सिंघ शिरोमणि गु. प्र. कमेटी की कार्यकारिणी के सदस्य चुने गए। २६ अप्रैल, १९३० ई. को शिरोमणि गु. प्र. कमेटी के दूसरे जनरल चुनाव के समय इनको सदस्य नामजद किया गया। ३० दिसंबर, १९३३ ई. को हुए विशेष जनरल इजलास तथा रहु-रीत कमेटी की एकत्रता के समय जत्थेदार ऊधम सिंघ शिरोमणि अकाली दल की कार्यकारिणी के सदस्य के रूप में हाज़िर हुए।

१८ जून, १९३६ ई. को शिरोमणि गु. प्र. कमेटी के अध्यक्ष पद के चुनाव के समय जत्थेदार ऊधम सिंघ ने अध्यक्ष के पद के लिए मास्टर तारा सिंघ जी का नाम तजवीज़ किया, जो सर्वसम्मति से प्रवान किया गया। १९३५ ई. में शिरोमणि गु. प्र. कमेटी की खड़ग-भुजा शिरोमणि अकाली दल के अध्यक्ष के रूप में सेवा संभाली। १९३६ ई. तक आज़ादी की लहर में शामिल होने के कारण इनको तीन वर्ष फिर जेल में गुज़ारने पड़े। पंजाबी सूबा मोर्चा के समय भी जेल-यात्रा की। जत्थेदार साहिब १९३३ ई. से १९३६ ई. तक ज़िला बोर्ड, श्री अमृतसर के सदस्य रहे। इस समय इन्होंने विद्या के प्रसार तथा सड़कों के निर्माण-कार्य में विशेष योगदान डाला। ३ अप्रैल, १९४० ई. को जत्थेदार ऊधम सिंघ की तजवीज़ पर फौजी सिक्खों के लिए लोह टोप पहनने के विरोध में प्रस्ताव पारित किया गया कि यह सिक्ख रहित मर्यादा एवं सिक्ख जज़्बातों की उल्लंघना है।

३० नवंबर, १९४० तथा २६ अक्तूबर, १९४१ ई. को जत्थेदार साहिब फिर शिरोमणि गु. प्र. कमेटी की कार्यकारिणी के सदस्य चुने गए। २६ अक्तूबर, १९४५ ई. को जत्थेदार ऊधम सिंघ नागोके ने आज़ाद हिंद फौज के फौजियों की रिहाई एवं आर्थिक सहायता का प्रस्ताव पेश किया और पारित करवाया। १९४६ ई. को श्री अमृतसर देहाती क्षेत्र से पंजाब विधान सभा के सदस्य चुने गए। १९४७ ई. में उपद्रवी लोगों तथा दंगाकारियों ने श्री दरबार साहिब पर हमला करना चाहा, जिसका मुकाबला करके जत्थेदार ऊधम सिंघ और उनके साथियों ने दिलेरी-कुर्बानी की मिसाल कायम की।

२८ मई, १९४८ ई. को हुए जनरल इजलास के समय जत्थेदार ऊधम सिंघ नागोके सिक्खों की प्रतिनिधि संस्था शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के अध्यक्ष पद पर सुशोभित हुए। इस जनरल इजलास के समय ही जत्थेदार ऊधम सिंघ नागोके (अध्यक्ष) को मुसलिम रियासत हैदराबाद की गड़बड़ को देखकर गुरुद्वारा (तख़्त) श्री अबिचल नगर हजूर साहिब, नांदेड़ की सुरक्षा तथा वहां बसते सिक्खों की हिफाज़त के लिए वहां जाकर पूरा प्रबंध करने के अधिकार दिए गए। इन्होंने पिछड़ी श्रेणियों की भलाई के लिए स्वतंत्र महकमा तथा सलाहकार कमेटी बनाई। ६ मार्च, १९४९ ई. को शिरोमणि गु. प्र. कमेटी के पिछले कामों की

रिपोर्ट हाऊस में जत्थेदार ऊधम सिंघ ने पेश की और सिक्ख धर्म के प्रचार-प्रसार तथा उन्नति के लिए ६ वर्षों के कार्यक्रम तैयार किए। 'गुरुद्वारा गज़ट' में साहित्यक बढ़ोतरी करने, शरणार्थियों की सहायता करने, दस्तकारी एवं पंजाबी भाषा के विकास के अलावा राजसी मतभेदों को गुरुद्वारा प्रबंध से बाहर रखने के महत्त्वपूर्ण फैसले किए गए। जत्थेदार ऊधम सिंघ नागोके की अध्यक्षता तले १० जून, १९४८ ई को पहला प्रस्ताव पारित किया गया कि भविष्य के लिए गुरुद्वारों को सिक्खी के स्रोत बनाया जाए तथा गुरुद्वारों में गुटबाजी का कोई प्रचार आदि न किया जाया करे।

१३ अप्रैल, १९४९ ई को जत्थेदार ऊधम सिंघ नागोके की अध्यक्षता में शिरोमणि गु. प्र. कमेटी के जनरल इजलास के समय फैसला हुआ कि नाजुक हालात को सम्मुख रखते हुए ओहदेदार तथा कार्यकारिणी के सदस्य पहले वाले ही रहें। इनकी अध्यक्षता के समय ही श्री गुरु ग्रंथ साहिब की पावन बीड़ देवनागरी लिपि में प्रकाशित करने का फैसला हुआ।

४ अप्रैल, १९५१ ई को शिरोमणि गु. प्र. कमेटी का जनरल इजलास जत्थेदार ऊधम सिंघ की अध्यक्षता में हुआ, जिसमें १५१ सदस्य हाज़िर थे। अध्यक्ष के चुनाव के समय जत्थेदार ऊधम सिंघ के मुकाबले मास्टर तारा सिंघ अध्यक्ष चुने गए। इस तरह जत्थेदार ऊधम सिंघ नागोके २८ मई, १९४८ ई से ४ अप्रैल, १९५१ ई तक शिरोमणि गु. प्र. कमेटी के अध्यक्ष पद पर सुशोभित रहे।

१९४६ ई से १९५२ ई तक जत्थेदार ऊधम सिंघ पंजाब विधान सभा के सदस्य रहे। १९५३ ई में कांग्रेस पार्टी द्वारा राज्य सभा के सदस्य चुने गए तथा १९६० ई तक सांसद के रूप में कार्यशील रहे। इस समय के दौरान ही ये पंजाब प्रदेश कांग्रेस वर्किंग कमेटी के सदस्य भी रहे।

इनके अध्यक्ष काल के समय ही गुरु नानक इंजीनियरिंग कॉलेज, लुधियाना अस्तित्व में आया तथा गुरुद्वारा प्रिंटिंग प्रेस का विस्तार किया गया। मिष्ट-भाषी तथा मिलनसार स्वभाव के कारण इनके सिक्ख संप्रदायों, टकसालों, धार्मिक सभा-सोसायटियों तथा सिक्ख जत्थेबंदियों का साथ बहुत अच्छे एवं विलक्षण सम्बंध रहे। खासकर ज्ञानी गुरबचन सिंघ जी खालसा भिंडरांवालों से इनका बहुत प्यार तथा मेल-मिलाप था।

पंडित जवाहर लाल नेहरू ने जत्थेदार ऊधम सिंघ नागोके को १९५२ ई में भारत सेवक समाज का मुखिया बनाया। इन्होंने १९५६ ई में 'सिक्ख धरम ते मौजूदा राजनीती' पुस्तक प्रकाशित करवाई। कहा जाता है कि यह पुस्तक इन्होंने पंडित नेहरू को खुश करने के लिए तथा मास्टर तारा सिंघ जी के विरोध में लिखी। जत्थेदार ऊधम सिंघ अंतिम समय संत चंनण सिंघ के ग्रुप में शामिल होकर मास्टर तारा सिंघ जी का विरोध करते रहे।

जत्थेदार साहिब १९६० ई में राज गोपाल आचार्य की स्वतंत्र पार्टी में शामिल हो गए और एक साल इसकी पंजाब इकाई के मुखिया भी रहे। प्रभावशाली शख़्सियत, निर्भय पंथक योद्धा, स्वतंत्रता सेनानी अकाली, जत्थेदार ऊधम सिंघ नागोके जत्थेदार, श्री अकाल तख़्त साहिब, अध्यक्ष, शिरोमणि गु. प्र. कमेटी, अध्यक्ष, शिरोमणि अकाली दल तथा सांसद रहे। ११ जनवरी, १९६६ ई को कुछ समय बीमार रहने के उपरांत पी. जी. आई. चंडीगढ़ में अकाल चलाना कर गए। २० मार्च, १९६६ को शिरोमणि गु. प्र. कमेटी के बजट इजलास के समय जत्थेदार ऊधम सिंघ नागोके के अकाल चलाना कर जाने पर शोक-प्रस्ताव जत्थेदार मोहन सिंघ तुड़ ने पेश किया जो सर्वसम्मति से पारित किया गया। इनकी तसवीर केंद्रीय सिक्ख संग्रहालय में सुशोभित है। इनकी यादगार गांव नागोके में बनी हुई है, जहां वार्षिक समारोह आयोजित किया जाता है।

ख़बरनामा

देश का कानून व प्रबंधकीय ढांचा
सिक्खों को बेगानगी का एहसास करवा रहा है : ज्ञानी गुरबचन सिंघ

श्री अमृतसर : ६ जून - जून, १९८४ में श्री हरिमंदर साहिब, श्री अकाल तख़्त साहिब तथा अन्य ऐतिहासिक स्थानों पर समय की केंद्रीय सरकार द्वारा अपने ही देश की फौज द्वारा हमला करवाकर भक्ति व शक्ति के प्रतीक श्री अकाल तख़्त साहिब को तहस-नहस कर दिया तथा हज़ारों निर्दोष सिंघ-सिंघणियों एवं बच्चों को शहीद कर दिया गया। भारतीय फौज द्वारा की इस ज़ालिमाना कार्यवाही का डटकर विरोध करते हुए दमदमी टकसाल के मुखिया संत जरनैल सिंघ भिंडरांवाले के अलावा भाई अमरीक सिंघ, बाबा ठाहरा सिंघ तथा जनरल शबेग सिंघ की अगुआई में सैकड़ों जुझारू सिंघ शहीद हो गए। शहीद हुए उन सिंघों की २९वीं याद को समर्पित शिरोमणि गु. प्र. कमेटी द्वारा श्री अकाल तख़्त साहिब में आरंभ करवाए श्री अखंड पाठ साहिब के भोग डाले गए और गुरबाणी-कीर्तन किया गया।

इस अवसर पर एकत्र संगत के विशाल इकट्ठ को संदेश देते हुए सिंघ साहिब ज्ञानी गुरबचन सिंघ, जत्थेदार, श्री अकाल तख़्त साहिब ने कहा कि आज विश्व भर में बसती सिक्ख संगत जून, १९८४ ई में हुए भयानक घल्लूघारे के दौरान हुए उन शहीदों की याद मना रही है, जिन्होंने तत्कालीन कांग्रेस हकूमत द्वारा किए फौजी हमले के दौरान तोपों, टैंकों के आगे लड़ते हुए शहादत प्राप्त की थी।

२९ साल गुज़र जाने के बाद यह साका आज भी कल की तरह ही तरोताजा लगता है तथा ये जख़्म सिक्ख मानसिकता में न भूलने वाले हैं। यह दर्द हमारे लिए इसलिए ज्यादा दुखदायक है और असहनीय है, क्योंकि जिस हिंदोस्तान के हाकिमों ने हमारे महान धार्मिक केंद्र श्री हरिमंदर साहिब तथा श्री अकाल तख़्त साहिब पर अपनी फौजें, तोपें, टैंक चढ़ाकर हमारे अस्तित्व को नेसतो-नाबूद करने का प्रयत्न किया है, उसके लिए हमारे पूर्वजों तथा शूरवीरों, योद्धाओं ने महान कुर्बानियां देकर इसको आज़ाद करवाया था। अगर १५ अगस्त का दिन भारतीय लोगों के लिए खुशी का दिन माना गया है तो ६ जून सिक्ख कौम के लिए बहुत ही दुख का दिन कहा जाएगा। आज़ाद भारत में हम ऐसे लूटे तथा मारे गए जैसे किसी दुश्मन देश के बाशिंदे हों।

जत्थेदार गुरबचन सिंघ ने कहा कि इस देश की सरहदों की रक्षा करने वाले देश-भक्तों की इस कौम पर जो जुल्म ढाया गया, उसको रहती दुनिया तक नहीं भुलाया जा सकेगा। पहले जून, १९८४ ई तथा फिर नवंबर, १९८४ ई में सिक्खों के साथ जो घटित हुआ इतिहास के वो काले दिन हमेशा ही सिक्खों की मानसिकता को झिंझोड़ते रहेंगे।

उन्होंने कहा कि आज भी इस देश का कानून तथा देश का प्रबंधकीय ढांचा सिक्खों को बेगानगी का एहसास करवा रहा है। हमारे सिक्ख नौजवान बड़ी संख्या में देश की जेलों में बंद किए हुए हैं। एक तरफ प्रो. दविंदरपाल सिंघ (भुल्लर) को बिना गवाहियों के फांसी लगाने की तैयारियां हो रही हैं जबकि दूसरी तरफ हजारों सिक्खों के कातिल सज्जन कुमार तथा जगदीश टाइटलर के खिलाफ सैकड़ों गवाहियां होने के बावजूद वे अदालतों से बरी किए जा रहे हैं। उन्होंने कहा है कि आज हमारे सामने एक बड़ा सवाल खड़ा हो रहा है कि हमने इस मुल्क में अपने अस्तित्व

तथा स्वाभिमान को कैसे कायम रखना है?

उन्होंने अपने संदेश में आगे कहा कि हम आज तक दुनिया के सामने अपना पक्ष सही ढंग से नहीं रख सके। हमारी हज़ारों कुर्बानियां होने के बावजूद पंजाब की हदों से आगे बसते दूसरे धर्म तथा विचारधारा वाले लोग हमें गलत निगाह से देखते हैं। सरकारी तंत्र तथा सरकारी मीडिया ने हमारे बारे में गलत तसवीर पेश करके हमारी महानता तथा हमारी कुर्बानियों को छोटा किया है। भारत के दक्षिण तथा पूर्व में बसने वाले करोड़ों लोगों को बताने की जरूरत है कि सिक्ख इस देश का धुरा हैं तथा इस कौम ने देश की आज़ादी के लिए सबसे ज्यादा योगदान डाला है। उन लोगों को बताने की जरूरत है कि आज़ाद भारत में आपके पंजाबी भाइयों के साथ इस देश के हुक्मरानों ने क्या और कैसे जुल्म किए। उन्होंने कहा कि इस उद्देश्य के लिए शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी महान विद्वानों, महान सिक्ख इतिहासकारों, पंथक पत्रकारों तथा सिक्ख-संघर्ष में हिस्सा ले चुके गुरसिक्खों के साथ विचार करके हर भाषा में एक किताबचा छापकर बांटे ताकि हमारे महान शहीदों की कुर्बानियां ऐसे ही न जाएं। यही आज के महान शहीदी दिवस पर अनेकों शहीद हुए सिंघों के प्रति हमारी सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

इस समरोह में शहीदों के पारिवारिक सदस्यों को सिरोपाउ देकर सम्मानित किया गया। इस समारोह में सिंघ साहिब ज्ञानी तरलोचन सिंघ, जत्थेदार, श्री केसगढ़ साहिब, श्री अनंदपुर साहिब; सिंघ साहिब ज्ञानी इकबाल सिंघ, जत्थेदार, तख़्त श्री हरिमंदर जी, पटना साहिब (बिहार); सिंघ साहिब ज्ञानी मल्ल सिंघ, मुख्य ग्रंथी, श्री हरिमंदर साहिब, श्री अमृतसर; सिंघ साहिब ज्ञानी गुरमुख सिंघ, मुख्य ग्रंथी, श्री अकाल तख़्त साहिब तथा जत्थेदार अवतार सिंघ, अध्यक्ष, शिरोमणि गु. प्र. कमेटी के अलावा सिंघ साहिब ज्ञानी जोगिंदर सिंघ, सिंघ साहिब भाई जसबीर सिंघ खालसा तथा सिंघ साहिब ज्ञानी पूरन सिंघ (तीनों भूतपूर्व जत्थेदार, श्री अकाल तख़्त साहिब), सिंघ साहिब ज्ञानी केवल सिंघ, भूतपूर्व जत्थेदार, तख़्त श्री दमदमा साहिब, तलवंडी साबो (बठिंडा) उपस्थित थे, शिरोमणि गु. प्र. कमेटी के अधिकारी-कर्मचारी, सभी सिक्ख संप्रदाओं के मुखिया तथा अन्य संगत भी भारी संख्या में हाजिर थी।

पाकिस्तान सरकार में दो सिक्खों की नुमाइंदगी प्रशंसायोग्य : जत्थे. अवतार सिंघ

श्री अमृतसर : १६ मई-- शिरोमणि गु. प्र. कमेटी के अध्यक्ष जत्थेदार अवतार सिंघ ने स. रमेश सिंघ अरोड़ा तथा स. सवरन सिंघ को पाकिस्तान असेंबली में नुमाइंदगी दिए जाने पर मुबारकबाद देते हुए इसको सिक्ख भाईचारे के लिए गौरवमयी बताया है।

जत्थेदार अवतार सिंघ ने कहा कि पाकिस्तान सरकार में अल्पसंख्यक सिक्ख भाईचारे को नुमाइंदगी देने से वहां बसते सिक्खों को गले लगाने वाली बढ़िया कार्यवाही है। उन्होंने कहा कि पाकिस्तान में लगभग १७२ ऐतिहासिक गुरुद्वारा साहिबान हैं तथा इनके नाम जायदादें भी हैं। सिक्ख भाईचारे की सरकार में नुमाइंदगी होने से सिक्ख मसले प्राथमिकता के आधार पर हल होने में मदद मिलेगी। उन्होंने कहा कि दुनिया के कोने-कोने में बसते सिक्ख भाईचारे ने सख़्त मेहनत करके अपना तथा उस देश का नाम ऊंचा किया है। इसी कारण कनाडा, अमेरिका, इंग्लैंड तथा अब पाकिस्तान में भी सिक्खों ने सरकार में शमूलियत करके गौरव हासिल किया है।

कनाडा में सिक्ख बच्चों को दसतार सजाकर खेलने से रोकना दुर्भाग्यपूर्ण

श्री अमृतसर : ८ जून-- जत्थेदार अवतार सिंघ, अध्यक्ष, शिरोमणि गु. प्र. कमेटी ने कनाडा में क्यूबैक सोकर फेडरेशन द्वारा सिक्ख खिलाड़ी-- स. अनिल सिंघ तथा स. सुखबीर सिंघ को दसतार सजाकर फुटबाल खेलने से रोके जाने वाले फैसले को बेहद दुर्भाग्यपूर्ण करार देते हुए कहा कि खेलों में जात-पात या धर्म के आधार पर किसी खिलाड़ी को खेलने से रोकना जायज़ फैसला नहीं है। उन्होंने कहा कि किसी सिक्ख खिलाड़ी के केसकी या दसतार सजाकर खेलने से किसी अन्य खिलाड़ी पर इसका क्या बुरा प्रभाव पड़ सकता है? उन्होंने कहा कि खेलते समय दसतार बांधे होने से सिर पर चोट लगने का बचाव रहता है। उन्होंने कहा कि अंतर्राष्ट्रीय इकाई फीफा तथा क्यूबैक सोकर फेडरेशन को चाहिए कि वो खिलाड़ियों की कद्र करे तथा स. अनिल सिंघ व स. सुखबीर सिंघ को दसतार सजाकर फुटबाल खेलने की इजाजत दे।

पंजाब से बाहरी राज्यों में इमारतों के चलंत कार्य शीघ्र सम्पूर्ण होंगे : जत्थेदार अवतार सिंघ

श्री अमृतसर : २५ मई-- शिरोमणि गु. प्र. कमेटी पंजाब से बाहर बसते सिक्ख भाईचारे के बच्चों को गुरमति विद्या देने के लिए पूरी तरह से तत्पर है। इस कार्य के लिए पंजाब से बाहर के राज्यों में संगीत विद्यालय तथा मिशन आदि खोले जा रहे हैं ताकि सिक्ख बच्चों को गुरमति के प्रचार एवं संगीत आदि की अच्छी शिक्षा दी जा सके। इन विचारों का प्रकटावा करते हुए जत्थेदार अवतार सिंघ, अध्यक्ष, शिरोमणि गु. प्र. कमेटी ने कहा कि रोज़ा, जिला शाहजहांपुर (उत्तर प्रदेश) में गुरमति संगीत विद्यालय खोला जा रहा है। इसकी इमारत का ६० प्रतिशत हिस्सा सम्पूर्ण हो चुका है। इसी तरह सिक्ख मिशन, काशीपुर (ज़िला ऊधम सिंघ नगर, उत्तराखंड) की इमारत का काम भी तेजी से चल रहा है। उन्होंने कहा कि भक्त कबीर जी की याद में मगहर, ज़िला गोरखपुर (उत्तर प्रदेश) में गुरुद्वारा साहिब के निर्माण का काफी काम सम्पूर्ण हो चुका है। यह गुरुद्वारा साहिब लखनऊ गोरखपुर मुख्य मार्ग पर स्थित है। दूर-दराज से इस रास्ते पटना साहिब जाने वाली संगत के ठहरने के लिए यहां अच्छा प्रबंध किया जा रहा है। इस गुरुद्वारा साहिब में श्री गुरु ग्रंथ साहिब का प्रकाश हो चुका है तथा गुरु का लंगर भी चल रहा है। सिक्ख इंटरमीडिएट कॉलेज, नारंगपुर, जोया, ज़िला जे. पी. नगर (उत्तर प्रदेश) में भी जल्द गुरुद्वारा साहिब का निर्माण करवाया जाएगा।

उन्होंने कहा कि इन स्थानों पर चलते भवन-निर्माण के काम को जल्द से जल्द पूरा करने हेतु सम्बंधित सचिव को हिदायत कर दी गयी है। बहुत जल्द ही इन इमारतों का निर्माण-कार्य सम्पन्न किया जाएगा।

प्रिंटर व पब्लिशर स. दलमेघ सिंघ ने गोल्डन आफसेट प्रेस, गुरुद्वारा रामसर साहिब, श्री अमृतसर से छपवा कर मालिक शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के लिए कार्यालय, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर से प्रकाशित किया। प्रकाशित करने की तिथि : ०१-०७-२०१३